भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) की केन्द्रीय कमेटी का मुखपत्र

दिसम्बर 2021

प्रतिरोध का स्वर

वर्ष 35
संख्या 12

मूल्य 2 रुपये

किसान आंदोलन की शानदार जीत: सरकार को काले कानूनों को वापस लेने के लिए मजबूर किया

भारत के किसानों ने सत्तारूढ़ आरएसएस–भाजपा के कॉरपोरेट–समर्थक फासीवादी एजेंडे को रोकने के लिए निर्णायक रूप से दखल की है। यह एक महान ऐतिहासिक क्षण है जिसने एक बार फिर जोर देकर बताया कि भारत किसानों का देश है, भारत अपने विशाल ग्रामीण इलाकों में रहता है। किसानों ने फासीवादी शासन के घोड़े की लगाम पकडने का साहस किया।

जब प्रधानमंत्री मोदी ने 19 नवंबर की सुबह अपनी सरकार द्वारा कृषि से संबंधित तीन कानूनों को निरस्त करने के निर्णय की घोषणा की, जिन्हें कोरोना लॉकडाउन अवधि के दौरान एक जल्दबाजी में की गई विधायी प्रक्रिया के जरिए से किसानों पर थोपा गया था, तो यह फासीवादी आरएसएस–बीजेपी की सरकार की शक्ति की सीमा की तथा सत्ताधारी साम्प्रदायिक फासिस्टों के इस हमले को हराने के लिए भारतीय जनता का संकल्प की स्वीकारोक्ति थी। लोगों की चिंताओं के प्रति एक बहरी और अंधी सरकार को अपने दृढ़ संकल्प से अवगत कराने के लिए 720 किसान दिल्ली की सीमाओं पर शहीद हुए हैं। यह घोषणा आरएसएस–भाजपा और उनकी सरकारों की यूपी के लखीमपुर खीरी में किसानों को पहियों के नीचे कुचलने में या हरियाणा के करनाल की तरह उनका सिर फोड़ने में विफलता की स्वीकारोक्ति भी थी। यह सरकार द्वारा किसान कार्यकर्ताओं के संकल्प को तोड़ने हेतु उनके खिलाफ लगाए जा रहे सैकड़ों झूठे मुकदमो की विफलता की भी स्वीकारोक्ति थी। शासकों ने किसानों को दूर रखने की पूरी कोशिश की लेकिन वे राजधानी की ओर बढ़े और सीमाओं पर घेराबंदी की। किसानों के दृढ़ संकल्प ने, जिसे कॉरपोरेट परस्त लोग जिद कहते हैं, सत्ता के अहंकार को परास्त कर दिया। सराकरी दमन के अलावा, आंदोलन ने आरएसएस–बीजेपी और कॉरपोरेट के मीडिया समर्थकों के दुष्प्रचार का सामना किया और उससे भी पार पाया।

तीन काले कानून जिन्हें किसान आंदोलन ने सरकार को निरस्त करने के लिए मजबूर किया, विदेशी और घरेलू कॉरपोरेट की सेवा में फासीवादी ताकतों के आर्थिक एजेंडे का हिस्सा थे। कानून भी दलाल शासकों द्वारा विश्व व्यापार संगठन की शर्तों, विशेष रूप से कृषि पर समझौते को पूरा करने के लिए एक कदम था। ये कानून खेती के सभी पहलुओं को कॉरपोरेट नियंत्रण में लाने के प्रयास था और इस हमले को वापस कराया गया है। विदेशी और घरेलू कॉरपोरेट ने फासीवादी शासकों का समर्थन इस उम्मीद में किया कि वे किसानों के प्रतिरोध को कुचलने में सक्षम होंगे। फासीवादी शासकों के हमलों को एक गंभीर झटका देकर किसानों ने उनकी आशा चकनाचूर कर दी। इस आंदोलन ने जन आंदोलनों के लिए एक लोकतांत्रिक स्थान खोल दिया है। वास्तव में यह आंदोलन अब तक अपने राजनीतिक रूप से आक्रामक और आर्थिक रूप से रक्षात्मक पहलुओं में सफल रहा है। इसने विरोध के अधिकार के खिलाफ फासीवादी शासकों के हमलों को पीछे धकेल दिया है और तीन कृषि कानूनों और बिजली विधेयक के रूप में आक्रामण को सफलतापूर्वक हराया है।

19 नवंबर की घोषणा पर्याप्त नहीं थी। इस शानदार जीत को किसान संगठनों की अन्य मांगों पर ठोस नतीजों से पक्का करना था। ये आंदोलन से उत्पन्न मुद्दों के साथ–साथ आंदोलन के अन्य मुद्दों से संबंधित थे। सरकार को इस आंदोलन के दौरान किसानों के खिलाफ दर्ज सभी आपराधिक मामलों को वापस लेने की घोषणा करने के लिए मजबूर होना पड़ा। सरकार को यह घोषणा करने के लिए भी मजबूर होना पड़ा कि इस आंदोलन के दौरान सीमा पर शहीद हुए किसानों को पंजाब सरकार की घोषणा के मानदंड के अनुरूप मुआवजा दिया जाएगा। आंदोलन की मांगों पर सरकार ने एमएसपी पर एक समिति के गठन की घोषणा की जिसमें केंद्र सरकार व राज्य सरकारों के प्रतिनिधि, किसानों के प्रतिनिधि जिनमें एसकेएम के प्रतिनिधि भी होंगे, तथा कृषि वैज्ञानिक शामिल होंगे। इस समिति का अधिदेश होगा "देश के किसानों को एमएसपी कैसे सुनिश्चित कराया जाए"। सभी हितधारकों – एसकेएम के साथ चर्चा के बाद ही बिजली विधेयक संसद में पेश किया जाएगा। पराली पर किसानों को संबंधित कानून की धारा 14 और 15 के तहत आपराधिक जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया गया है।

9 दिसंबर को केंद्र सरकार से लिखित रूप में इन प्रतिबद्धताओं के साथ, किसान संगठनों ने आंदोलन की ऐतिहासिक जीत और इसका स्वरूप को बदलने की घोषणा की। इस आंदोलन की मांग शुरू में 3 कृषि कानूनों और बिजली विधेयक, 2020 को वापस लेने पर केंद्रित थी। एसकेएम ने 11 दिसम्बर के बाद से दिल्ली की सीमाओं –सिंघु, टीकरी और गाजीपुर – से धरना उठाने की घोषणा की। लगभग डेढ़ साल के संघर्ष की परिणति एक ऐतिहासिक जीत में हुई। महत्वपूर्ण बात यह भी है कि किसानों के मुद्दों को राष्ट्रीय एजेंडा और राष्ट्रीय चेतना में लाया गया। इस आंदोलन के विजयी अंत ने सत्ताधारी फासीवादियों को बचाव की मुद्रा में धकेल दिया है और उनके हमलों से जूझ रहे लोगों का हौसला बढ़ाया है।

यह आंदोलन एक अनुकरणीय गैर–संसदीय जुझारू जन आंदोलन रहा है। यह शांतिपूर्ण था फिर भी शासकों को चुनौती दे रहा था; यह अनुशासित था फिर भी शासकों के अहंकार की जंजीरों को तोड़ रहा था। आंदोलन एक लोगों की विशाल लामबंदी और बड़े पैमाने पर विरोध के रूप में रहा है जो किसानों की सामूहिक भागीदारी के लिए अनुकूल रहा। यह आंदोलन शांतिपूर्ण चुनौती का प्रतीक था; आंदोलन पर लगाए गए प्रतिबंधों का अहिंसक उल्लंघन। यह लोगों की भागीदारी के आधार पर जुझारू जन दिशा– जनता की भागीदारी के आधार पर दृढ़ संकल्प व जुझारूपन से जनता का अपने लक्ष्यों की ओर आगे बढ़ने का एक उदाहरण रहा है। किसानों को कुछ भी नहीं रोक पाया और किसानों ने जनता की परवाह की। आंदोलन के दौरान उन्होंने 26 जनवरी की साजिश सहित शासक वर्गों द्वारा मार्शल किए गए नौकरशाही–सुरक्षा तंत्र के बड़े ब्लॉकों का सामना किया। वह आंदोलन जिसमें 26 जनवरी की साजिश को हराने की गहराई और दृढ़ता थी, का सफल होना तय था। एक आंदोलन जिसने महामारी की विनाशकारी दूसरी लहर का सामना तब किया जब सड़कें सुनसान थीं और कब्रिस्तानों व नदियों में लाशें भरी हुई थी, को दरकिनार नहीं किया जा सकता था। यह आंदोलन पहले ही हजारों अध्ययनों और सैकड़ों छायाकंनों को प्रेरित कर चुका है और आगे भी प्रेरित करेगा। इसने दुनिया भर

(आगे पृष्ठ 5 पर)

कैमूर वन अधिकार संघर्ष मोर्चा और अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा के संयुक्त तत्वाधान में कैमूर पहाड़ी और सोन नदी के कछार पर बसे रोहतास जिले के अकबरपुर में 15 नवंबर को "उलगुलान" विद्रोह के महानायक बिरसा मुंडा के 146 वें जन्मदिवस पर आयाजित रैली

बढ़ती असमानता और मानवाधिकार का संघर्ष

कमल सिंह

अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस की शुरुआत 10 दिसंबर, 1950 को हुई। इससे 2 साल पहले 10 दिसंबर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की आम सभा ने मानव अधिकार घोषणा पत्र जारी किया था जिसके 30 अनुच्छेद हैं। ये अधिकार सभी देश जहां कैसी भी राजनीतिक विचारधारा या समाज व्यवस्था हो ये अधिकार लागू होते हैं। इन मानवाधिकारों की आधारशिला सामंतवाद के विरोध में लोकतंत्र क्रांति की परचम महान फ्रांसीसी क्रांति 1789 द्वारा घोषित ''स्वतंत्रता, समानता, भाईचारा'' है। छह साल (1939–45) तक चले दूसरे विश्व युद्ध में सात करोड़ से अधिक लोग मारे गए थे। मानव इतिहास का यह सबसे खूनी संघर्ष माना जाता है। इससे पहले 1914 से 1918 तक चले प्रथम विश्वयुद्ध में लगभग 1 करोड़ लोगों के मारे जाने का अनुमान है। इन दोनों युद्धों मे 1.6 लाख से अधिक भारतीय सैनिक मरे। युद्धों के कारण बीमारियों और कुपोषण के कारण लाखों लोग मारे गए। युद्ध के बाद, उपनिवेशवादी गुलामी के खिलाफ आजादी के संघर्षों की नयी लहर आयी। दूसरी ओर ''वैश्विक तनाव'' और तीसरे विश्वयुद्ध की संभावना, ''वैश्विक शांति'' आंदोलन की शुरूआत ये वे परिस्थितियां थीं, जब 10 दिसंबर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की आम सभा ने मानव अधिकार घोषणा पत्र जारी किया था।

असमानता मानवाधिकार दिवस का थीम

हर वर्ष मानवाधिकार दिवस का एक थीम घोषित किया जाता है। इस साल मानवाधिकार की थीम समानता : ''असमानता कम करना और मानवाधिकारों को आगे बढ़ाना'' है। विश्व बैंक ने संभावना व्यक्त की है करोना महामारी के बाद 2021 तक दुनिया में 15 करोड़ लोग गरीबी की चपेट में होंगे। क्रेडिट सुईस की ग्लोबल वेल्थ रिपोर्ट 2018 में तो कहा गया था कि देश की सबसे अमीर एक फीसदी आबादी के पास 51.5 फीसदी संपत्ति है। संयुक्त राष्ट्र द्वरा जारी एक रिपोर्ट में बताया गया है कि लगभग दुनिया भर में विषमता बढ़ रही है जिससे समाजों में दरारें पड़ रही हैं, आर्थिक व सामाजिक विकास बाधित हो रहा है और समाज में टकराव बढ़ रहा है। यह ''विश्व सामाजिक रिपोर्ट–2020 संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक व सामाजिक मामलों के विभाग (डेसा) ने प्रकाशित की है। संयुक्त महासचिव एंतोनियो गुटेरेश ने इस रिपोर्ट का हवाला देते हुए कहा है, दुनिया गहरे और विषम वैश्विक आर्थिक संकट से गुजर रही है। विकसित व विकासशील देशों में विषमता और रोजगार असुरक्षा के कारणों से व्यापक प्रदर्शन हो रहे हैं। आय में असमानता और रोजगार के अवसरों की कमी के कारण विषमताओं का कुचक्र बन गया है और लोगों में हताशा और निराशा है।

2019 में वैश्विक स्तर पर अरबपतियों की कुल संपत्ति में गिरावट के बावजूद, पिछले दशक में अरबपतियों की संख्या में तेजी से बढ़ोतरी हुई है। फोर्ब्स मैगजीन दुनिया के अरबपतियों की सूची जारी करती है उसके अनुसार दुनिया में सबसे अधिक अरबपति अमेरिका में 724, चीन में 626 के बाद तीसरे नंबर पर भारत में 140 अरबपति हैं। ऑक्सफोम के अनुसार दुनिया भर में 18 मार्च से 31 दिसंबर, 2020 तक दुनिया के 10 सबसे बड़े अरबपतियों की संपत्ति में 540 बिलियन डॉलर का इजाफा हुआ है। जबकि इस दौरान 2 करोड़ से 50 करोड़ लोग गरीब हो गए हैं।

भारत की गिनती अब दुनिया के गरीब और उन देशों में होती है जहां सर्वाधिक असमानता है। ''असमानता पर वैश्विक रिपोर्ट (World Inequality Report) 2022 में बताया गया है देश की कुल राष्ट्रीय आय के पांचवें हिस्से पर (22 प्रतिशत) 1 प्रतिशत ''सुपर रिच'' का कब्जा है और इसमें निचले स्तर पर जी रही लगभग आधी आबादी के हिस्से को कुल जमा 13 प्रतिशत ही मिल पाता है। भारत में एक वयस्क की औसत आय 2 लाख 4200 रूपए है वहीं आम 50 प्रतिशत लोग 53,610 रुपए सालाना कमा पाते हैं जबकि ऊपरी तबके के 10 प्रतिशत लोगों की आमदनी 11 लाख 66.520 रुपए है। यह रिपोर्ट पेरिस स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स की विश्व असमानता लैब में सहनिर्देशक जाने–माने अर्थशास्त्री लुकास चौनेल, थॉमस पिकेटी सहित दुनिया के प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों ने तैयार की है।

ऑक्सफैम इंटरनेशनल द्वारा जारी की गई असमानता वायरस रिपोर्ट (The Inequality Virus Report) में कहा गया है, ''कोविड–19 ने भारत और दुनिया भर में मौजूदा असमानताओं में अत्यधिक वृद्धि की है।'' कोरोना के कारण दुनिया में 16 लाख लोगों की मौत हो चुकी है और आर्थिक संकट के चलते कई कारोबार बंद हो गए और लाखों नौकरियां चली गईं। लेकिन दुनिया के 60 प्रतिशत से ज्यादा अरबपति साल 2020 में और अमीर हो गए हैं और इनमें से पांच अरबपतियों की कुल दौलत 310.5 अरब डॉलर बढ़ गई है। भारत में जिस समय करोना और लॉकडाउन के कारण बेरोजगार–बेघर होकर हजारों लोग मीलों पैदल पलायन कर रहे थे, अरबपतियों की सूची में नए 40 लोग शामिल हो रहे थे। इस सूची में उन लोगों को जगह मिलती है, जिनकी दौलत 1 अरब डॉलर (करीब 7,300 करोड़ रुपये) से अधिक होती है। इनमें सबसे अधिक दौलतममंद मुकेश अंबानी और सबसे तेज गति से अमीर बने अरबपति गौतम अडानी हैं। ''देश के दस फीसदी सर्वाधिक धनी लोगों के पास देश की कुल संपत्ति का करीब 80.7 फीसदी है जबकि 90 फीसदी आबादी के पास कुल संपत्ति का महज 19.3 फीसदी है।'' रिपोर्ट का संपादन प्रोफेसर टी. हक और डी. एन. रेड्डी ने किया है और इसमें 22 अध्याय हैं जिन्हें विख्यात अर्थशास्त्रियों और अन्य सामाजिक विज्ञानियों ने लिखा है।

मानवाधिकारों पर हमला

बढ़ते आर्थिक–राजनीतिक संकट, भूख, गरीबी. बेरोजगारी, महंगाई और अभाव के कारण जन विक्षोभ और आक्रोष तेज हो रहा है। इसे कुचलने के लिए सत्ता निरंतर निरंकुश और दमनकारी हो रही है। ऐसे में नागरिक व मानवाधिकारों की हिफाजत के लिए नई चुनौतियां सामने हैं। ''द इकोनॉमिस्ट इंटेलीजेंस यूनिट'' की एक रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत 2019 के लोकतंत्र सूचकांक की वैश्विक सूची में 10 स्थान लुढ़क कर 51वें स्थान पर आ गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ की मानवाधिकार परिषद द्वारा मोदी सरकार के शासन में भारत में लोकतंत्र, नागरिक व मानवाधिकारों के हनन पर रिपोर्ट जारी की गई है। ग्लोबल स्टेट ऑफ डेमोक्रेसी रिपोर्ट के अनुसार ''दुनिया में लोकतंत्र का सबसे अधिक हनन एशिया–प्रशांत क्षेत्र में हो रहा है और इसमें भारत, इंडोनेशिया और श्रीलंका सबसे आगे हैं। इन देशों में बहुलवाद और धार्मिक–जातीय विविधता को तेजी से खत्म करने की कोशिश हो रही है। धार्मिक उन्माद को राष्ट्रवाद का जामा पहना कर पेश किया जा रहा है, सत्ता का केन्द्रीकरण हो गया है और अल्पसंख्यकों के विरुद्ध हिंसा भड़काई जा रही है।'' इस रिपोर्ट की प्रस्तावना भारत के पूर्व चुनाव आयुक्त एस वाई कुरेशी ने लिखी है। रिपोर्ट में कहा गया है ''पिछले वर्ष कोविड 19 वैश्विक महामारी ने सरकारों को लोकतंत्र कुचलने का एक नया हथियार दिया है। सामान्य कानून प्रणाली को खोखला करना और अभिव्यक्ति की आजादी पर हमला पूरी दुनिया में लोकतांत्रिक सरकारें कर रहीं हैं। जिन देशों में तथाकथित लोकतंत्र है, वहां पर सरकारें इससे पीछा छुड़ाने में व्यस्त हैं, अब तो भारत, दक्षिण अफ्रीका और अमेरिका जैसी वैश्विक आर्थिक और राजनैतिक शक्तियां भी इसी राह पर चल पड़ी हैं।''

देश में सरकार मावाधिकारों को नए सिरे से परिभाषित करने का प्रयास कर रही है। प्रधान मंत्री नरेन्द्र मोदी ने 12 अक्टूबर, 2021 को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के 28वें स्थापना दिवस कहा, "मानवाधिकारों के नाम पर कुछ लोग देश की छवि खराब करने की कोशिश करते हैं।'' राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अध्यक्ष न्यायमूर्ति अरुण मिश्रा ने कहा, ''बाहरी ताकतों के इशारे पर भारत पर मानवाधिकारों के उल्लंघन का आरोप लगाना नया नियम बन गया है।'' उन्होंने इस अवसर पर गृह मंत्री अमित शाह का यशगान इन शब्दों में किया ''आपके प्रयासों से जम्मू–कश्मीर और देश के उत्तर–पूर्वी हिस्से में अब 'शांति और कानून व्यवस्था' का एक नया युग शुरू हो गया है।" इस ''नए युग'' की एक झलक हाल ही में नागालैंड में 13 मासूम कोयला मजदूरों की सुरक्ष बलों द्वारा की गई हत्या में देखी जा सकती है। राजद्रोह, यूएपीए, रासुका जैसे दमनकारी कानून और अफस्पा जैसे कानून जो सुरक्षा बलों को देश के प्रचलित कानून से मुक्त करते हैं, अविलम्ब समाप्त किए जाने चाहिए। मानवाधिकारों के प्रति सरकार के नजरिए की गम्भीरता राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल के वक्तव्य से और अधिक स्पष्ट होती है। प्रशिक्षु आईपीएस अधिकारियों के 73वें बैच के दीक्षांत समारोह में डोभाल ने नागरिक अधिकार संगठनों के दमन का एजेण्डा पेश करते हुए इन्हें राष्ट्रोही दुश्मन की तरह बरतने की नसीहत देते हुए नौकरशाहों से कहा, "पारंपरिक युद्ध जिस राजनीतिक या सैन्य मकसद को हासिल करने के लिए लड़े जाते थे उसकी जगह सिविल सोसाइटी जंग का मैदान और हथियार बनेंगे। इसे फोर्थ जनरेशन ऑफ वॉरफेयर कह सकते हैं।.. एक पुलिस अधिकारी की भूमिका अब कानून की रक्षा, हिफाजत या अमल तक ही नहीं बल्कि 'राष्ट्र निर्माण' में भी है।''

गुजरात के बाद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने अब उत्तर प्रदेश को हिंदुत्व की राजनीति की प्रयोगशाला के रूप में चुना है। योगी आदित्यनाथ को इसकी कमान सौंपी गई है। 'लव जेहाद' के नाम पर जीवन साथी चुनने के महिलाओं के अधिकार पर पहरेदारी, शत्रु संपत्ति के नाम पर अलपसंख्यकों का दमन, सांप्रदायिक ध्रुवीकरण के लिए मथुरा–काशी का मुद्दा उछालना आदि इसी कड़ी के अंग हैं। 2021 में ईसाइयों पर सबसे अधिक हमले (66) उत्तर प्रदेश में हुए हैं (पूरे देश में 305 हमलों की रिपोर्ट है)। मार्च 2017 में भाजपा के सत्तारूढ़ होने के बाद प्रदेश में ''ठोको राज'' के नाम पर पुलसिया कहर बरपा रखा है। 8,472 कथित मुठभेड़ की 3,200 फायरिंग वारदातों में 146 लोग मर चुके हैं और 3,302 विकलांग हो गए हैं। इसके बावजूद तथ्य यह है कि उत्तर प्रदेश अपराध, खासकर हत्या के अपराध के मामलों में सबसे आगे है। पुलिस राज का एक उदाहरण गोरखपुर में कानपुर के व्यवसायी मनीष गुप्ता की अवैद्य वसूली के लिए हत्या का मामला है। महिलाओं एवं दलितों के खिलाफ अपराध की स्थिति हाल ही में प्रकाशित राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो से स्पष्ट होती है। इसके अनुसार 2019 में महिलाओं एवं दलितों के खिलाफ अपराध के कुल 405,861 दर्ज मामलों में से सर्वाधिक 14.7 फीसदी (59,853) उत्तर प्रदेश में दर्ज किए गए थे। हाथरस में दलित युवती के साथ सामुहिक बलात्कार के बाद मृतका की लाश को पुलिस द्वारा जबरन जलाने की वीभत्स घटना के बाद भी बलात्कार की घटनाएं रुकी नहीं हैं। राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो की रिपोर्ट 2020 में बताया गया है ''यूपी में हर 2 घंटे में एक महिला के साथ बलात्कार और हर 90 मिनट में बच्चों के बलात्कार मामला दर्ज किया जाता है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को कुचला जा रहा है, सत्ता समर्थक गोदी मीडिया है तो सवाल उठाने वालों पर राजद्रोह व यूएपीए जैसे दमनकारी कानूनों के इस्तेमाल की हालिया घटनाओं में पत्रकार विनोद दुआ का मामला है। राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो की रिपोर्ट 2020 के अनुसार यूएपीए के तहत सबसे अधिक (361) गिरफ्तारियां उत्तर प्रदेश में हुई हैं, जबकि जम्मू कश्मीर में 346 को गिरफ्तार किया गया है। प्रधानमंत्री ''राजनीति से प्रेरित और मावाधिकार कर्मियों पर ''सलेक्टिव'' होने का आरोप लगा रहे हैं। ''रिपोर्टर्स विदाउट बॉर्डर्स'' की एक रिपोर्ट में कहा गया है, ''भारत पत्रकारिता के लिए दुनिया के सबसे खतरनाक देशों में शामिल है। इसी संस्था द्वारा जारी 2021 की वर्ल्ड प्रेस फ्रीडम इंडेक्स में भारत को 180 देशों में 142वें स्थान पर रखा गया था। वर्षों के संघर्ष से हासिल मजदूरों के अधिकार छीने जा रहे हैं। 44 श्रम कानूनों को कतर कर चार कानूनों में समेटा जा रहा है। संगठित होने, आंदोलन और हड़ताल करने के अधिकारों को रौंदा जा रहा है।

(असमाप्त)

दरांग (असम) : सरकार द्वारा जबरन विस्थापन के दौरान हिंसा

असम के दारांग जिले के सिपाझार राजस्व क्षेत्र के चार इलाके के ढोलपुर गाँव में जबरन विस्थापन के दौरान राज्य द्वारा की गयी हिंसा के मामले में एक रिपोर्ट

जनहस्तक्षेप की पहल पर गठित एक जांच दल ने 1 नवंबर 2021 को असम के दारांग जिले के सिपाझार राजस्व मंडल के गोरुखुटी के धौलपुर एक, धौलपुर दो और धौलपुर तीन गांव जो कि हाल ही में हिंसा से प्रभावित हुए थे, का दौरा किया। जनहस्तक्षेप नेत्रित टीम के सदस्यों में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में संकाय डॉ विकास बजपाई, दिल्ली विश्वविद्यालय के देशबंधु कॉलेज के प्रोफेसर बिस्वजीत मोहंती, और स्वतंत्र पत्रकार एवम भुवनेश्वर, ओडिशा के विस्थापन विरोधी कार्यकर्ता श्री सुधीर पटनायक शामिल थे।

हमारी यात्रा का उद्देश्य तथ्य खोज करने तक सीमित नहीं था। घटनाओं के क्रम के बारे में काफी तथ्य सार्वजनिक क्षेत्र में सामने आ चुके हैं। वीडियो साक्ष्य सहित ये तथ्य, सिपाझार चार क्षेत्र में लोगों पर किए गए घोर अन्याय और क्रूरता को प्रमाणित करते हैं। भारत के लोगों की भलाई के लिए चिंतित नागरिकों के रूप में हमारा इरादा धौलपुर के लोगों द्वारा झेली जा रही पीड़ा का प्रथम व्यक्ति खाता प्राप्त करना और घटनाओं के पूरे अनुक्रम के अंतर्निहित कारणों का पता लगाना था।

बेदखली : हेमंत बिस्वा सरमा सरकार की एक भ्रामक चाल

जबरदस्ती बेदखली के विषय में पहले से ही ज्ञात तथ्यों को दोहराए बिना यह कहा जाना चाहिए कि 20 और 23 सितंबर 2021 को हुई घटनाओं का सबसे क्रूर पहलू लोगों के जीवन और आजीविका की सुरक्षा के प्रति सरकार की निर्लज्ज उदासीनता है। हालांकि पिछले कुछ वर्षों में, मुस्लिम अल्पसंख्यक और विशेष रूप से बंगाली भाषी मुसलमान, राज्य में असुरक्षा की भावना से पीड़ित रहे हैं, लेकिन लोगों ने बताया की प्रशासन और पुलिस की चकित करने वाली व निर्लज्ज कार्यवाही द्वारा अपने घरों से बेदखल किए जाने से वे हतप्रभ थे। उन्होंने बताया की बेदखली से पहले किसी भी सरकारी अधिकारी या सरकारी एजेंसी ने लोगों के साथ बात करने का कोई प्रयास नहीं किया ताकि उन्हें उनकी भूमि के अधिग्रहण के कारणों के बारे में अथवा पुनर्वास या मुआवजे के विषय में बताया जाता।

जिला पुलिस प्रशासन ने अपनी जबरन कार्यवाही के प्रति लोगों को बेखबर रखने के लिए जानबूझकर धोखाधड़ी की है, यह इस बात से विदित होता है कि विविध मामले संख्या 20/2021 में जहीरुल इस्लाम को 10 सितंबर 2021 तिथित बेदखली नोटिस से स्पष्ट हो जाता है। 19 सितंबर 2021 को रात 12 बजे उन्हें नोटिस तामील किया गया और अगली सुबह पुलिस और प्रशासन उनका घर गिराने के लिए पहुँच गए। नोटिस में स्पष्ट लिखा था की नोटिस की प्राप्ति के तीन माह के भीतर उन्हें अपना स्थान छोड़ना होगा, किन्तु 'तीन महीने के भीतर' इन शब्दों को सफेद स्याही से मिटा दिया गया था (रिपोर्ट के साथ नोटिस सलंग्न था)। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि प्रशासन की मंशा लोगों को बेखबर पकड़ने की थी ताकि वे कम से कम प्रतिरोध कर सकें। प्रशासन और पुलिस की ओर से ऐसा रवैया राज्य तंत्र में व्याप्त आपराधिक मानसिकता को स्पष्ट दर्शाता है। ऐसे रवैये की निगाह में यह आश्चर्य की बात नहीं है कि पुलिस ने मोइनुल (जिनकी की बेदखली मुहिम में हत्या की गयी थी) की लाश पर गोलियां चलाईं; मोइनुल की हत्या बेदखली मुहिम के दौरान अपने गाँव की महिलाओं के साथ पुलिस की बदसलूकी का विरोध करते हुए पुलिसवालों की बर्बरता के कारण हुई थी। धौलपुर में हमने जितने भी लोगों से बात की, उनमें से अधिकांश ने बेदखली की कार्रवाई के अचानक व बिना किसी पूर्व सूचना के किए जाने की पुष्टि की।

राज्य सरकार की ओर से उजड़े परिवारों को उचित मुआवजा या पुनर्वास प्रदान करने की कोई मंशा नहीं मालूम देती है। यह बात लोगों को बेदखल करने के लिए अपनाए गए तरीके में ही निहित है। तदुपरान्त राज्य सरकार द्वारा गुवाहाटी उच्च न्यायालय में लोगों की अवैध बेदखली को चुनौती देने वाली नागरिक रिट याचिका के मामले में टालमटोल का रवैया अपनाया जा रहा है। घर से बेघर करने के बाद राज्य सरकार लोगों को मुआवजा देने के लिए तमाम शर्तें लगा रही है, जैसे कि उनका नाम एनआरसी में दर्ज होना चाहिए, या फिर लोगों को यह साबित करना होगा कि उनका किसी भी भूमि पर अवैध कब्जा नहीं था। लेकिन यह बात कहीं स्पष्ट है कि अगर कोई व्यक्ति यह साबित कर दे की उसके पास जो भूमि थी वह अवैध रूप से अधिग्रहित नहीं थी, तब गैरकानूनी रूप से उसे अपनी जमीन से बेदखल करने के लिए सरकार पर क्या कार्यवाही होगी? अदालत के समक्ष सरकार का यह रवैया एक घिनौना मजाक है। यदि सरकार की लोगों के प्रति वाकई इतनी निष्ठा है तो उसे लोगों को अपने कब्जे की जमीन की कानूनी वैद्यता स्थापित करने का मौका पहले ही देना चाहिए था, किन्तु इस आवश्यकता की अनदेखी करते हुए सरकार ने एकतरफा रूप से जमीनी हकीकत बदलने के लिए तेजी से कदम उठाया और अब वह लोगों पर शर्तें थोप रही है। सरकार की यह नीति इस ही प्रकार की हुई जैसे कोई डकैत डकैती डालने के बाद पकड़े जाने पर डकैती का सामान वापस करने के लिए शर्त रखने लगे।

'द न्यू इंडियन एक्सप्रेस' अखबार में प्रकाशित 24 सितंबर 2021 की एक रिपोर्ट के अनुसार असम के मुख्यमंत्री, हेमंत बिस्वा सरमा ने कहा है कि – केवल 60 परिवारों को बेदखल करना था, लेकिन घटनास्थल पर 10,000 लोग विरोध करने के लिए जुट गए॰ वे कहां से आए हैं? उन्हें कौन लाया?" इस रिपोर्ट के अनुसार मुख्यमंत्री ने यह आरोप भी लगाया कि 'कुछ परिवारों का 300 बीघे तक की भूमि पर कब्जा था', और यह कि 'एक शिव मंदिर की भूमि भी अतिक्रमण के अधीन थी।' राज्य सरकार के अधिकारियों द्वारा एक और बयान प्रचारित किया गया कि 77,000 बीघा, (लगभग 25,454 एकड़) जमीन जो कथित बंगलादेशी मुसलमानो के अवैध कब्जे में है, को जैविक खेती परियोजना के लिए खाली करवाने की आवश्यकता है।

मुख्यमंत्री के इस तरह के बयान लोगों को गुमराह करने के लिए बेशर्म धूर्तता के अलावा और कुछ नहीं हैं। दावा 60 परिवारों को विस्थापित करने की जरूरत का किया गया, लेकिन हमने पाया कि कुल 966 परिवारों को घर से बेघर कर दिया गया है, जिसका मतलब है की लगभग सात हजार लोगों को बेदखल किया गया है। बेदखल किए गए लोगों द्वारा यह बताया गया था कि दावा किए गए 77,000 बीघे में से आधे से अधिक भूमि पहले ही ब्रह्मपुत्र नदी के गर्भ में जा चुकी है।

क्या मकसद अवैध कब्जा हटाना है या फिर निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए जमीन हथियाना है?

यह ध्यान रखना जरूरी है कि 77,000 बीघा भूमि को अतिक्रमणकारियों से मुक्त करना, जो कि 20 और 23 सितंबर, 2021 को राज्य द्वारा बेदखली अभियान का कथित उद्देश्य था, उसे जून 2021 में ही हासिल कर लिया गया था। 9 जून 2021 को असम ट्रिब्यून में छपी एक रिपोर्ट में कहा गया था:

मुख्यमंत्री हेमंत बिस्वा सरमा ने आज यहां मंत्रिपरिषद की बैठक की अध्यक्षता करते हुए दरांग जिले के गोरुखुटी, सिपाझार में 77,000 बीघा सरकारी भूमि का उपयोग कृषि उद्देश्यों के लिए करने का निर्देश दिया, जिसके लिए पद्मा हजारिका की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया है।

इसके अतिरिक्त, जिस भूमि से ग्रामीणों को बेदखल किया गया है, वह पहले से ही खेती के लिए उपयोग में थी, अतः उसे कृषि के लिए उपयोग में लाने का क्या मतलब है?

असम सरकार की चालबाजिओ का कुछ और ही मकसद है और सरकार निहित स्वार्थों की ओर से काम कर रही है। यह बात पार्वती दास, जो ढालपुर–2 गांव में शिव मंदिर की स्थापना करने वाले दिवंगत महंत की पत्नी हैं, के कथन से प्रतीत होती है। विस्थापित गाँव वालों पर मंदिर की जमीन को भी हथियाने का आरोप लगाया जा रहा है। यह अलग संयोग है कि सितंबर माह के बेदखली अभियान में पुलिस ने पार्वती दास के घर को भी गिरा दिया है।

पार्वती दास ने बताया कि उनके पति ने ढालपुर–2 गांव में शिव मंदिर की स्थापना की थी। हालांकि उनके पड़ोस में कोई हिंदू परिवार नहीं था, लेकिन गांव के मुस्लिम परिवारों ने मंदिर के निर्माण में योगदान दिया था। मंदिर के निर्माण के बाद, ब्रह्मपुत्र के पार के गांवों के कुछ हिंदुओं ने मंदिर में पूजा–अर्चना करना शुरू कर दिया और मंदिर के प्रबंधन के लिए एक समिति का गठन भी कर लिया। मंदिर समिति की मांग पर मंदिर के रख–रखाव के लिए राजस्व उत्पन्न करने के लिए 120 बीघा भूमि मंदिर को दी गयी थी। हालाँकि, यह भूमि वर्षों पहले नदी द्वारा नष्ट हो चुकी है और अब समिति द्वारा मंदिर को दोबारा 175 बीघे भूमि दिये जाने की नई मांग उठाई गई है।

पार्वती दास ने बताया कि उनके पति को मंदिर के संबंध में निर्णय लेने की प्रक्रिया में हाशिए पर रख दिया गया था, और आठ वर्ष पूर्व अपने पति की मृत्यु के बाद से पार्वती दास की मंदिर के मामलों में कोई दिलचस्पी नहीं थी।

गोरुखुटी में क्रूर बेदखली अभियान की पृष्ठभूमि असम सरकार द्वारा पारित असम भूमि नीति, 2019 द्वारा रच दी गयी थी। राज्य के स्थायी और अस्थायी चार क्षेत्रों के संबंध में नीति के अनुच्छेद 1.14 और 1.15 में कहा गया है कि:

1.14 .... चूंकि अतिक्रमण को तत्काल हटाना है, अतिक्रमण दंड (बेदाखली जरीमोना) एकत्र करने की प्रणाली को बंद कर दिया जाएगा। हालांकि आवंटित भूमि के खिलाफ तौजी बहिरा की व्यवस्था जारी रहेगी। राजस्व अधिकारी अतिक्रमणकारियों को जल्द से जल्द बेदखल करने के लिए बाध्य होंगे।

1.15 इसके अलावा, भूमि के आवंटन और बंदोबस्त पर ऐसी भूमि के लिए विचार नहीं किया जाएगा जो किसी भी सरकार या सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए आरक्षित है या आर्द्र भूमि, पहाड़ियों, पर्यावरण स्थलों, वन भूमि और भूस्खलन या कटाव के लिए संवेदनशील भूमि घोषित की गई है।

यदि मुख्यमंत्री की हालिया घोषणाएं कोई संकेत हैं तो गोरुखुटी की घटनाएं अपनी तरह की आखिरी नहीं हैं। 3 नवंबर, 2021 को 'इंडिया टुडे' में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार, मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा ने कहा:

"गोरुखुटी के बाद, हमें लुमडिंग रिजर्व फॉरेस्ट को साफ करने की जरूरत है। हम सौहार्दपूर्ण ढंग से बात कर रहे हैं और मैंने कई अल्पसंख्यक संगठनों से बात की है और फिर से बात करूंगा।"

हमें लगता है कि सरकार की प्रेरणा बड़े कॉरपोरेट के वाणिज्यिक और लाभ वृद्धि के उद्देश्य से लोगों से अधिक से अधिक भूमि हथियाने की उसकी इच्छा से उपजी है। कुछ ग्रामीणों द्वारा हमारे ध्यान में यह बात लायी गई उन्होंने सरकार द्वारा पाम तेल के उत्पादन के लिए व्यावसायिक वृक्षारोपण के लिए उपयुक्त भूमि की मांग की बात सुनी है। कॉरपोरेट लाभ आधारित आर्थिक विकास मॉडल की अनिवार्य शर्तों को देखते हुए, लोगों का कल्याण, विशेष रूप से उन तबकों का जो कि पहले से ही हाशिए पर हैं, सरकार के लिए शायद ही कोई चिंता का विषय है।

बेदखल किए गए लोगों की परिस्थितियाँ

क्षेत्र में बेदखल किए गए लोगों की वर्तमान स्थिति नाजुक बनी हुई है। वे टिन, पुआल, और बांस से बने अस्थायी शेड में रह रहे हैं, जहां स्वच्छता कि कोई व्यवस्था नहीं है, सुरक्षित पेयजल आपूर्ति की कमी है, भोजन की गंभीर कमी है, और कोई भी चिकित्सा देखभाल नहीं है। यह बताया गया था कि कुछ गैर सरकारी संगठनों और निजी निकायों ने भोजन के माध्यम से कुछ राहत प्रदान की है, और पानी के लिए कुछ हैंडपंप स्थापित किए हैं, लेकिन स्थिति की व्यापकता को देखते हुए इस तरह की मदद केवल समुद्र में बूंद से भी कम योगदान के बराबर है। यह उल्लेखनीय है कि हमारी टीम को इन लोगों तक मदद पहुंचने के लिए किसी भी रूप में एक भी ऐसी सरकारी

(शेष पृष्ठ 7 पर)

गरीबों को लूट अमीरों को देना आरएसएस–भाजपा सरकार की अर्थनीति

पेट्रोल डीजल के ऊंचे कीमतो की बड़ी वजह टैक्सों का भार

अनिल दुबे

वैश्विक महामारी कोरोना संकट काल के बीते डेढ़ वर्षो में 7 करोड़ नए लोग गरीबी की रेखा की सीमा से नीचे आ चुके हैं। करोड़ों लोगों का रोजगार छिन गया है और उद्योग धंधे ठप हैं। आम आदमी के इस आर्थिक संकट के दौर में महंगाई बेतहाशा बढ़ रही है जिसमें एक बड़ी भूमिका पेट्रोलियम पदार्थों पेट्रोल, डीजल, रसोई गैस की लगभग रोजाना हो रही वृद्धि की भी है। केंद्र में सत्तारूढ़ आरएसएस– भाजपा की नरेंद्र मोदी सरकार पेट्रोलियम पदार्थों पर अप्रत्यक्ष कर अर्थात एक्साइज ड्यूटी के जरिए महामारी, बेरोजगारी, महंगाई से जूझ रही जनता की गाढ़ी कमाई लूट रही है और अपने 7 वर्ष के कार्यकाल में अब तक उसने लगभग 23 लाख करोड़ रुपए की लूट की है। वहीं दूसरी ओर इस संकट की घड़ी में अंबानी और अदानी जैसे कारपोरेट घरानों की संपत्तियां दोगुनी से अधिक हुई हैं जबकि गरीब और गरीब हुआ है। कुछ लोगों के निरंतर अमीर होते जाने और बड़ी संख्या में लोगों के गरीब होने के पीछे बड़ी वजह सत्ता में रहने वाली शासक वर्गों की राजनीतिक पार्टियां हैं जो टैक्स का ढांचा ही ऐसा बनाती हैं जिसमें धनवान व्यक्ति पर कम से कम टैक्स पड़ता है और अमीरों की श्रेणी से नीचे उतरते–उतरते लोग जितने गरीब होते जाते हैं, उस पर उतना ही अधिक टैक्स का बोझ बढ़ता जाता है। चूंकि 90 प्रतिशत आबादी की इतनी आय ही नहीं है कि वह टैक्स दे सके लेकिन अप्रत्यक्ष करों के जरिए उससे भी सरकारें कर वसूलती हैं। मोदी सरकार के कार्यकाल में लोगों के हालात और बिगड़े हैं जबकि उसने अप्रत्यक्ष करों के जरिए अपना खजाना भरा है, लेकिन महामारी और मंदी के दौर में जिन क्षेत्र के लोगों की कमाई बढ़ी या बरकरार रही उन पर उसने कोई टैक्स नहीं लगाया बल्कि उन्हें उल्टा छूट दी गई है।

आरएसएस–भाजपा सरकार के कारपोरेट संबंधों का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि सितंबर 2019 में मोदी सरकार ने मात्र 2 दिनों के अंदर कारपोरेट टैक्स 30 प्रतिशत से घटाकर 22 प्रतिशत कर दिया था। मोदी सरकार की कारपोरेट टैक्स घटाने की जल्दबाजी का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि प्रधानमंत्री ने अपने आपात और अप्रत्याशित स्थिति में उठाए जाने वाले कदम नियम–12 का सहारा लिया जिसके तहत फैसला पहले होता है और उसकी मंजूरी कैबिनेट से बाद में ली जाती है लेकिन पेट्रोलियम पदार्थों की कीमतों में कमी के लिए एक्साइज ड्यूटी में कटौती करने के लिए इस अधिकार का इस्तेमाल नहीं किया गया जबकि सभी तरह का ईंधन सस्ता कर संकटों से जूझ रही जनता को राहत दी जा सकती थी।

दीपावली से ठीक पूर्व सरकार ने पेट्रोल पर 5 और डीजल पर 10 रूपए की एक्साइज ड्यूटी कम कर दिया, क्योंकि अब से कुछ महीनों बाद ही उत्तर प्रदेश व पंजाब सहित पांच राज्यों के विधानसभा चुनाव होने हैं। इसलिए केंद्र सरकार ने केंद्रीय उत्पाद शुल्क में कटौती की और फिर इसका अनुसरण करते हुए कुछ राज्य सरकारों मसलन उत्तर प्रदेश ने भी वैट घटा कर कीमतें कम की हैं। हालांकि इस समय अंतरराष्ट्रीय बाजार में क्रूड आयल (कच्चे तेल) की कीमतें भी तेजी से गिर रही हैं। पिछले पखवाड़े अंतरराष्ट्रीय बाजार में क्रूड आयल 79 डालर प्रति बैरल से भी नीचे चला गया था। हालांकि पेट्रोल और डीजल की कीमतों में कमी एक चुनावी फैसला भी है जो चुनाव के बाद फिर से बढ़ने लगेगा। ज्ञात हो कि बंगाल, असम, केरल, तमिलनाडु और पुडुचेरी के विधानसभा चुनावों के समय भी पेट्रोलियम पदार्थों की कीमतों का बढ़ना रुक गया था और चुनाव खत्म होते ही बढ़ने का सिलसिला शुरू हो गया।

देश में पेट्रोलियम पदार्थों की कीमतों को लेकर पूर्ववर्ती सरकारें भी भारी विदेशी मुद्रा भुगतान का सवाल उठाती रही हैं। इसलिए उस पर कथित रूप से सब्सिडी देने का प्रावधान रखा गया, जिसे धीरे–धीरे करके समाप्त कर दिया गया। दरअसल सब्सिडी शब्द का इस्तेमाल ही यहां गलत है क्योंकि सब्सिडी तो तभी हो सकती है जबकि लागत से कम पर बिक्री हो। पहले सरकारें डीजल पर ड्यूटी पेट्रोल के मुकाबले नहीं लगाती थी तथा मिट्टी के तेल को खरीद और उसके रिफाइनरी खर्च की लागत पर बेचती थी। बाद की सरकारों ने पेट्रोल की तर्ज पर डीजल पर भी टैक्स लगाना शुरू कर दिया। अब पेट्रोल व डीजल की कीमतें पेट्रोलियम कंपनियां तय करती हैं। होना यह चाहिए था कि सरकार किसान, गरीब उपभोक्ता और कम आय वर्ग के लोगों के हितों को ध्यान में रखते हुए पेट्रोलियम पदार्थों पर कर नहीं लगातीं।

देश में पेट्रोलियम पदार्थों की कुल खपत का 85 प्रतिशत भारत सरकार को आयात करना पड़ता है। मान लें कि अंतरराष्ट्रीय बाजार में आज कच्चे तेल की कीमत लगभग 75 डालर प्रति बैरल है तो क्रूड आयल की एक बैरल की कीमत रुपयों में 5540.32 होती है। एक बैरल में 159 लीटर होता है तो प्रति लीटर कच्चे तेल की कीमत 34.84 रूपए पड़ती है। क्रूड आयल की खरीद और रिफाइनरी का खर्च व कच्चे तेल का प्रोसेस करने के बाद वह पेट्रोल डीजल की शक्ल में डीलर्स और पेट्रोल पंप तक पहुंचता है जहां इस पर केंद्र सरकार एक्साइज ड्यूटी व राज्य सरकारें वैट और डीलर अपना कमीशन जोड़ कर कीमत घोषित करते हैं। इस तरह 75 डालर वाला प्रति बैरल कच्चा तेल पंप तक पहुंचते–पहुंचते पेट्रोल के रूप में उसकी कीमत 37.58 रुपए प्रति लीटर हो जाती है और इस पर केंद्र सरकार 32.90 रूपए की एक्साइज ड्यूटी और राज्य सरकारी वैट लगाती हैं।

दिल्ली में डीलरों का कमीशन 3.80 रुपए होता है। राज्य सरकारें वैट कर लगाती हैं। इसकी भी राज्यों में अलग–अलग दरें होती हैं। दिल्ली में 2019 में 16 रूपए वैट था जो अब बढ़कर 22 रूपए हो गया है। इसी तरह केंद्र सरकार 19.48 रूपए प्रति लीटर पेट्रोल और 15.35 रुपए प्रति लीटर डीजल पर एक्साइज ड्यूटी लगाती थी जो अब इन दोनों ही उत्पादों पर 32 रूपए से अधिक है। इस प्रकार उपभोक्ताओं तक पेट्रोल जिस कीमत पर पहुंचता है उस पर उन्हें लगभग 65 प्रतिशत टैक्स देना पड़ता है। पेट्रोल और डीजल की कीमतों में रोजाना बदलाव होता है। इसलिए यह रकम कम या ज्यादा होती रहती है। इसको इस तरह से समझ सकते हैं कि दिल्ली में 4 नवंबर 2021 को पेट्रोल का बेसिक मूल्य 47.93 रूपए था। उस पर माल भाड़ा 30 पैसा लगा और डीलर का प्राइस चार्ज और एक्साइज ड्यूटी और वेट 48.23 रूपये लगा। इसमें एक्साइज ड्यूटी 27.90 रूपए डीलर कमीशन 3.85 रुपए और 23.99 रुपए वैट के लगे। इस तरह 4 नवंबर को दिल्ली में पेट्रोल की कीमत 103.97 रूपए थी।

उदाहरणार्थ अक्तूबर 30, 2021 को दिल्ली में पेट्रोल 108 रुपये 99 पैसे प्रति लीटर तथा डीजल 97 रुपये 72 पैसे प्रति लीटर था।
एक लीटर पेट्रोल पर केन्द्र सरकार का आबकारी कर 32 रुपये 90 पैसे प्रति लीटर था।
दिल्ली सरकार का वैट 30 रुपये प्रति लीटर था।
डीलर कमीशन 3 रुपये 85 पैसे प्रति लीटर था।

कोरोना जैसी भीषण महामारी के दौर में 2020–21 में आरएसएस–भाजपा की सरकार ने लगभग चार लाख करोड़ रुपए पेट्रोल–डीजल से एक्साइज ड्यूटी के नाम पर कमाए। 2014 में डीजल पर सेंट्रल एक्साइज 8 प्रतिशत था जो अब खुदरा कीमत का 35 प्रतिशत हो गया है। राज्यों का वैट 2014 में डीजल से 12 प्रतिशत था तो अब वह 15 प्रतिशत है। वर्ष 2013–14 में कांग्रेस की संप्रग सरकार ने 78000 हजार करोड़ रुपए एक्साइज ड्यूटी से एकत्र किए थे। 2014 में पेट्रोल पर 9.2 रुपए प्रति लीटर और डीजल पर 3.46 रुपए प्रति लीटर एक्साइज ड्यूटी थी, जो अब बढ़कर 35 रूपए पेट्रोल पर और 32 रूपए डीजल पर हो गई। मई 2014 में क्रूड आयल 107 डॉलर प्रति बैरल था तो पेट्रोल 71 और डीजल 57 रूपए प्रति लीटर था। जून 2021 में क्रूड आयल 76 डालर था तो पेट्रोल 98 और डीजल 89 रुपए प्रति लीटर था। इस तरह मोदी सरकार ने पेट्रोल डीजल पर एक्साइज ड्यूटी से 23 लाख करोड़ रुपए का टैक्स लिया और उसे कारपोरेट घरानों को छूट के तौर पर दिया। राज्यों को वैट से 2019–20 में 2 लाख 493 करोड़ रुपए की आय हुई थी, तो केंद्र सरकार ने एक्साइज ड्यूटी से 2020–21 में 3 लाख 89 हजार 662 करोड रुपए की कमाई की थी।

वर्ष 2013 के सितंबर माह में भारत में पेट्रोल 74 रूपए 10 पैसे प्रति लीटर और डीजल 65 रूपए 93 पैसे प्रति लीटर था।

नवंबर 2021में पेट्रोल डीजल की कीमत भारत में 100 रूपए के ऊपर है तो अमेरिका में 0.79 डॉलर प्रति लीटर पेट्रोल की कीमत है। पाकिस्तान में पेट्रोल 56 रूपए प्रति लीटर, श्रीलंका में 68 रुपये प्रति लीटर, भूटान में 70 रुपये प्रति लीटर और नेपाल में 81 रूपए प्रति लीटर है।

महंगाई के दौर में जब खाने–पीने की आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं खास तौर पर खाद्य तेलों, दालें, दूध, सब्जियों आदि के दाम आसमान छू रहे हैं तो उसमें रसोई गैस की कीमतों में वृद्धि से आम लोगों का जीवन और दुष्कर हो गया है। मोदी सरकार के सत्ता में आने से पहले मार्च 2014 में रसोई गैस का 14 लीटर का सिलेंडर 410 रूपए में था जो अब 944 रूपए का हो गया है। कोरोना महामारी की दूसरी लहर चरम पर थी तो उन महीनों में रसोई गैस की कीमतों में 175 रूपए की वृद्धि हुई। नवंबर 2020 में प्रति सिलेंडर की कीमत 638.50 रुपए थी जो अब बढ़कर 944 रूपए हो गई है। ऐसे में सरकार की उज्ज्वला योजना के तहत कथित मुफ्त गैस कनेक्शन देने की योजना का अर्थ समाप्त हो गया है क्योंकि गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की महंगी रसोई गैस खरीदने की स्थिति नहीं है। हालांकि उज्जवला योजना अपने आप में विवादों से घिरी है। कोरोना संकट काल में जहां रेहड़ी, पटरी, खोमचा और छोटे–मोटे होटल और ढ़ाबे चलाने वालों का कारोबार ठप हो गया था। अब उनके लिए रसोई गैस एलपीजी सिलेंडर की कीमतों में दीपावली के ठीक पूर्व भारी वृद्धि की गई है। एलपीजी का कमर्शियल गैस सिलेंडर (19 किलो) की कीमत में 265 रूपए की बढ़ोतरी की गई है। इस तरह अब 1733 रुपए का कमर्शियल सिलेंडर लगभग 2000 रूपए का हो गया है। चेन्नई आदि शहरों में यह 2133 रुपए में मिलेगा। इसने खाने–पीने की छोटी–मोटी दुकान चलाने वाले व्यापारियों की कमर तोड़ दी है, तो खाने–पीने की वस्तुओं की कीमतों में और तेजी से वृद्धि होगी।

वर्ष 2010 में कांग्रेस की संप्रग सरकार ने पेट्रोल की कीमतों को सरकारी नियंत्रण से मुक्त कर अर्थात डीरेगुलेट कर दिया था। सरकारी नियंत्रण को समाप्त करने

दिल्ली में एल.पी.जी. के 14.2 किलो के सिलिंडर का दाम अगस्त 2013 में 411 रुपये 99 पैसे था। आज दिसम्बर 2021 में इस 14.2 किलो के सिलिंडर का दाम 899 रुपये 50 पैसे है।

का अर्थ था कि जैसे–जैसे अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल की कीमतें बढ़ेंगी देश में तेल कंपनियां उसी हिसाब से उनकी कीमतें तय करेंगी। इससे तेल की कीमतों का बोझ अब सीधे–सीधे आम उपभोक्ताओं के कंधों पर आ गया। वर्ष 2014 में केंद्र में आरएसएस–भाजपा सरकार सत्ता में आई तो उसने उसी वर्ष अक्टूबर माह में डीजल को भी सरकारी नियंत्रण से मुक्त कर दिया। इस तरह किसानों के नाम पर डीजल पर मिलने वाली कथित सब्सिडी समाप्त हो गई। अर्थात डीजल पर भी सेंट्रल एक्साइज और वैट लागू हो गया। पुरानी व्यवस्था में भी डीजल पर कर पेट्रोल जैसा ना होने का फायदा किसानों से अधिक जेनरेटर

(शेष पृष्ठ 6 पर)

किसान आंदोलन की शानदार जीतः सरकार को काले कानूनों को वापस लेने के लिए मजबूर किया

(पृष्ठ 1 से आगे)

के लोगों को कॉरपोरेट और प्रतिक्रिया के खिलाफ उनके संघर्ष में प्रेरित किया है। यह वह आंदोलन है जिससे लोकगीत बुने जाते हैं। इसने एक बार फिर ऐतिहासिक सत्य साबित कर दिया है कि अपने संकल्प में एकजुट लोगों को हराया नहीं जा सकता।

ऐसे कई अटकलें रही हैं और आगे भी रहेंगी कि सरकार ने मांगों को अमुक समय ही क्यों स्वीकार किया। यह लोहे की छड़ की तरह है जो अनेक वारों के बाद टूटती है। जाहिर है कि किसानों का निरंतर दृढ़ संकल्प सबसे महत्वपूर्ण और निर्णायक कारक है। संघर्ष अपने उपरिकेंद्र में मजबूत होता गया और देश के विभिन्न हिस्सों में अपनी पहुंच और गहराई में फैलता रहा; यह आंदोलन मूलतः अखिल भारतीय चरित्र का था। सरकारी दमन, जबरदस्ती और तोड़फोड़ के सभी प्रयासों को किसानों के संघर्ष ने विफल कर दिया जो इन काले कानूनों को निरस्त करने के अलावा कुछ भी स्वीकार करने को तैयार नहीं थे। किसानों ने इस कॉरपोरेट जहर को संशोधनों की विभाजित खुराक में लेने से इनकार कर दिया था। उन्होंने कानूनों के कार्यान्वयन को स्थगित करने निलंबित मृत्युदंड के प्रयासों को खारिज कर दिया था। किसानों का दृढ़ निश्चय इतना मजबूत था कि समझौते की पक्षधर ताकतों जिनमें कुछ किसान नेता भी शामिल रहे, को खामोश कर दिया और किसानों के सामने ऐसा बोलने की उनकी हिम्मत नहीं हुई।

यह आंदोलन इतना मजबूत था कि इसने बड़े पैमाने पर लोगों को जगाया तथा इस गैर संसदीय संघर्ष का असर चुनावी परिदृश्य पर भी पड़ने लगा। पश्चिम बंगाल में आरएसएस–भाजपा की हार ऐसी ही एक घटना थी। हाल के उपचुनावों में आरएसएस–भाजपा की हार ने एक बार फिर किसानों के आंदोलन पर ध्यान दिलाया। इसने हिंदुत्व फासीवाद के तिलस्म को तोड़ा है और शासक वर्ग के तंत्र में एक ऐसी दरार पैदा की है जिससे लोगों के मोहभंग का लावा बहने लगा है। फासीवाद पराजयवाद से पोषण पाता है जिसे वह पैदा करता है; किसान आंदोलन ने पराजय के इस निराशावाद को पराजित कर दिया। इस धुंध के छटने से, लोग इन हमलों को पूर्णता में समझेंगे तथा संघर्ष में उठने के लिए प्रेरित होंगे। पांच राज्यों की विधानसभाओं के आगामी चुनाव, विशेष रूप से सबसे अधिक आबादी वाले प्रांत उत्तर प्रदेश के चुनावों ने निश्चय ही सत्तारूढ़ फासीवादियों और उनके कॉरपोरेट समर्थकों को परेशान कर दिया। जबकि सत्तारूढ़ फासीवादियों को सत्ता के आसन्न नुकसान की आशंका थी, उनके कॉरपोरेट समर्थकों को डर था कि भारी चुनावी नुकसान उनके प्रतिनिधियों को भविष्य में ऐसे सुधारों से रोकेगा जिस तरह के सुधार कॉरपोरेट चाहते हैं। उत्तर प्रदेश में किसान आंदोलन ने सत्तारूढ़ आरएसएस–भाजपा की राज्य को सांप्रदायिक रूप से ध्रुवीकरण करने की क्षमता को कम कर दिया, विशेष रूप से इसके सांप्रदायिक रुप से संवेदनशील पश्चिमी भाग में, हालांकि वे कोशिश तो करेंगे ही। हिंदुत्व के 'तिलस्म' के टूटने के साथ ही समाज के अन्य तबके भी फूट डालो और राज करो के इस डिजाइन के वास्तविक मकसद को समझेंगे।

इन कारकों में हाल ही में वैश्विक महत्व की एक घटना भी शामिल है जिसका केंद्र दुनिया के इस हिस्से में है। वह है अफगानिस्तान से अमेरिका की हारकर वापसी। 15 अगस्त, 2021 को अमेरिकी वित्त पोषित, शस्त्रों से लैस और प्रशिक्षित अफगानिस्तान सेना पराजित हो गई और तालिबान सत्ता में आ गये। अपने सारे अंडे अमेरिकी टोकरी में रखने वाले आरएसएस–भाजपा के शासक दंग रह गए। भारतीय राज्य के अपने फासीवादी अधिग्रहण को आगे बढ़ाने के लिए स्वेच्छा से धारण किये अपने अंधेपन में हिंदुत्व शासकों ने रूसी शासकों को भी दूर कर दिया, जो भारत के शासकें के भरोसेमंद सहयोगी थे। अमेरिकी पराजय के बाद अफगानिस्तान में जगह बनाने के प्रयास में आरएसएस–बीजेपी सरकार ने अफगानिस्तान के पड़ोसी देशों को इकट्ठा करने के प्रयास को वांछित परिणाम नहीं मिला। पाकिस्तान ने इनकार कर दिया और चीन ने कन्नी काट ली। ईरान ने अमेरिकी कब्जे की आलोचना की और रूस ने एनएसए के सम्मेलन के बाद भारत द्वारा जारी बयान के विपरीत एक अलग बयान जारी किया। नई स्थिति ने आरएसएस–भाजपा शासकों को अमेरिकी आधिपत्य की छत्रछाया में महाशक्ति बनने के उनके सुखद सपनों से जगा दिया। उभरती हुई स्थिति ने भारतीय शासकों को दुनिया के इस हिस्से में नई वास्तविकता और इस क्षेत्र में प्रभाव के लिए पाकिस्तान पर अमेरिकी साम्राज्यवाद की बढ़ती निर्भरता के प्रति सचेत किया; उन्हें पाकिस्तान और चीन से लगी सीमाओं के प्रति सावधान किया। उन्होंने पहले ही जम्मू–कश्मीर को अशांत कर रखा है और अब वे दूसरे सीमावर्ती राज्य यानी पंजाब के लोगों का गुस्सा और नहीं बढ़ाना चाहते। इस स्थिति ने सांप्रदायिकता के उनके हथियार की धार उग्रराष्ट्रवाद को भी कमजोर कर दिया है।

किसानों के संघर्ष ने तीन कानूनों को रद्द करा दिया है और फासीवादी शासन को झटका दिया है। इसने लोगों की चेतना में अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर कॉरपोरेट के नियंत्रण की भयावह स्थिति को भी लाया है। साथ ही इसने कृषि संकट को दूर करने के सवाल को एजेंडा पर ला दिया है।

वर्तमान संघर्ष की जीत के विशाल पैमाने के बावजूद, एक दृष्टि से यह एक आंशिक जीत है क्योंकि कृषि संकट के कारण, जो किसानों के जीवन की बिगड़ती परिस्थितियों, उनकी बढ़ती ऋणग्रस्तता, निरंतर किसान आत्महत्याओं आदि में प्रकट होते हैं, का समाधान नहीं हुआ है। किसानों ने सर्प के फन को तो तोड़ दिया है जो उन्हें काटने आए थे, लेकिन अभी तक उन जोंकों को फेंकना बाकी है जो उनके श्रम का खून चूस रही हैं। किसानों ने शासकों की उस साजिश को नाकाम कर दिया है जो कृषि संकट को दूर करने के नाम पर उन्हें अपनी जमीन से ही मुक्त करना चाहते थे। फिर भी कृषि संकट के मूल में जो कारण हैं, उनका समाधान किया जाना बाकी है। इस आंदोलन ने किसान आंदोलन के और आगे बढ़ने के लिए जमीन तैयार की है यानी कृषि संकट को संबोधित करने में एक विशाल कदम की ओर बढ़ना जो मौजूदा भारतीय समाज की आर्थिक संरचना से जुड़ा हुआ है।

हमें स्पष्ट होना चाहिएं – एमएसपी पर महत्वपूर्ण उपलब्धि हुई है लेकिन इस मुद्दे को हल नहीं किया गया है। इसे प्राप्त करने के लिए निश्चित रूप से किसान आंदोलन को एक बड़े उभार की आवश्यकता होगी। सरकार द्वारा गठित की जाने वाली समिति को भारत के किसानों को एमएसपी सुनिश्चित कराने का मेंडेट दिया गया है। एमएसपी के प्रश्न में तीन पहलू शामिल हैं। सबसे पहले, इसका विस्तार यानी यह सभी किसानों के लिए उपलब्ध होना चाहिए जिसमें अन्य बातों के साथ–साथ सभी फसलें शामिल हों, इसमें आदिवासी क्षेत्रों में उत्पादित फसलों सहित सभी फसलों को शामिल करना चाहिए। एसएपी और सहकारी कीमतों सहित सभी कीमतें एमएसपी फॉर्मूले के अनुरूप होनी चाहिए। दूसरे इसकी गणना लाभकारी मूल्य प्रदान करने के लिए होनी चाहिए। किसान संगठन और एसकेएम स्वामीनाथन कमगटी के सी2+50% के फॉर्मूले को लागू करने की मांग कर रहे हैं। स्वामीनाथन फॉर्मूला कुछ खर्चों को ध्यान में नहीं रखता है। इसलिए कुछ विशेषज्ञों ने गणना की है कि रमेश चंद्र की सिफारिशों जिसमें किसान के खर्च के अन्य सभी मदों को शामिल किया गया है, लेकिन इसमें कम प्रतिशत जोड़ा गया है से भी उतना ही एमएसपी होता है। लगातार सरकारों ने लाभकारी कीमतों को लागू करने से इनकार किया है। उदाहरण के लिए, स्वामीनाथन की सिफारिश सरकार (तत्कालीन यूपीए–I सरकार) द्वारा गठित पैनल द्वारा दी गई थी पर यूपीए ने लागू नहीं की। बाद में आरएसएस–बीजेपी नामित प्रधानमंत्री मोदी द्वारा इसका समर्थन किया गया था परंतु सत्ता में आने के बाद इसे लागू करने से इनकार कर दिया। तीसरा पहलू है एमएसपी कवरेज को प्रभावी बनाया जाना चाहिए। एमएसपी को स्पष्ट रूप से एक कानूनी अधिकार बनाया जाना चाहिए और इस अधिकार का प्रयोग करने के लिए खरीद की मशीनरी प्रभावी होनी चाहिए यानी किसानों को लंबे इंतजार या भुगतान में देरी का सामना नहीं करना पड़े। एमएसपी पर खरीद के लिए सरकार की तत्परता के बिना कानूनी गारंटी प्रभावी नहीं होगी, जैसा कि हम न्यूनतम मजदूरी के अधिकार में देखते हैं। इसी तरह से भावांतर जैसी योजना भी निष्प्रभावी रही हैं। सरकारी हस्तक्षेप द्वारा समर्थित कानूनी अधिकार ही गारंटी प्रदान कर सकता है।

पूरे भारत में किसान संगठनों को एक मंच पर लाना यानी संयुक्त किसान मोर्चा (एसकेएम) इस संघर्ष की एक विलक्षण उपलब्धि रही है और इस एकता की अवश्य रक्षा की जानी चाहिए। एसकेएम ने किसान जनता की आकांक्षाओं को आवाज दी और उसका वाहक बन गया। एमएसपी को कानूनी अधिकार के रूप में हासिल करने और कृषि संकट के कारणों को दूर करने के लिए किसानों के आंदोलन को एक नया वेग देना आवश्यक होगा। इसके लिए किसानों के संघर्ष–समर्थक संगठनों के बीच अधिक सामंजस्य और एकता बहुत महत्वपूर्ण होगी। इस आंदोलन में क्रांतिकारी किसानों संगठनों की बड़ी भूमिका रही है। इसे आगे ले जाने में भी इनकी बड़ी भूमिका होगी।

फासीवादी शासकों के आक्रमण को हराने के अलावा, किसान आंदोलन का दीर्घकालिक महत्व इस तथ्य में भी निहित है कि यह उस बदलाव का अग्रदूत हो सकता है जो भारत को नवजनवादी परिवर्तन की ओर आगे बढ़ा सकता है। शासक वर्गों ने लंबे समय से विशेष रूप से साम्राज्यवादी देशों से निवेश पर निर्भर विकास के मार्ग का अनुसरण किया है। भारतीय शासक वर्गों ने कभी भी भारतीय जनता की दशा सुधारने के आधार पर विकास का मार्ग नहीं अपनाया। उन्होंने इसे कुछ लोगों की समृद्धि का पर्याय मान गया, जबकि भारी बहुमत को ट्रिकलडाउन प्रभाव की प्रतीक्षा करनी थी।

एमएसपी के लिए किसान आंदोलन मजदूरों और किसानों की स्थिति में सुधार के लिए भारतीय लोगों के एक बड़े आंदोलन का हिस्सा है। यह कॉरपोरेट हितों के लिए मजदूरों और किसानों के दमन की वर्तमान प्रक्रिया को चुनौती दे सकता है और विकास की प्रक्रिया के केंद्र में मांग बढ़ाने यानी भारतीय जनता के भारी बहुमत यानी किसानों और कामगारों की स्थिति में सुधार का सवाल रखता है। किसानों के लिए लाभकारी मूल्य सुनिश्चित करना उस आंदोलन का महत्वपूर्ण हिस्सा होगा जिसमें मजदूर वर्ग के बेहतर जीवन और कामकाजी परिस्थितियों को सुनिश्चित करना, कृषि आदानों की सस्ती कीमत के साथ–साथ छोटे और सीमांत किसानों को मुफ्त मशीनरी सेवा प्रदान करके और आम तौर पर वृद्धि करना शामिल होगा। व्यय से आय बढ़ाने के लिए औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि करके विशाल ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार। साथ ही कारगर भूमि सुधार इसका जरूरी अंग हैं। औपनिवेशिक शासकों ने भारत में कृषि और उद्योग के बीच के संबंधों को तोड़ दिया था। वर्तमान कारपोरेट विरोधी आंदोलन, जो भारत की जनता के साम्राज्यवाद–विरोधी आंदोलन का हिस्सा है, उसको जोड़ने और देश में दो पैरों पर खड़े विकास करने, का लक्ष्य होना चाहिए।

यह आंदोलन व्यापक किसान जनसमुदाय का था, खासकर उन क्षेत्रों में जो इसके उपरिकेंद्र में थे। देश में कृषि की स्थिति विविध है। लेकिन किसान जनता हर जगह उत्पीड़ित है। उनके उत्पीड़कों में जमींदार, साहूकार, व्यापारी और अधिकारी शामिल हैं। वर्तमान आंदोलन यदि इसकी ऊर्जा का सही और सख्ती से उपयोग किया जाए तो यह किसानों के और अधिक व्यापक आंदोलन को जन्म दे सकता है जो देश में नए लोकतांत्रिक क्रांतिकारी आंदोलन को मजबूत करने की दिशा में मजदूर वर्ग और देशभक्त तबकों के साथ विकसित हो सकता है।

(9 दिसंबर, 2021; अंग्रेजी से अनूदित)

महानायक बिरसा मुंडा के 146 वें जन्म दिवस पर कैमूर पठार पर चढ़ा आदिवासियों का रंग

वनों से विस्थापन व उत्पीड़न के खिलाफ फिर ''उलगुलान'' का संकल्प

कैमूर वन अधिकार संघर्ष मोर्चा और अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा के संयुक्त तत्वाधान में कैमूर पहाड़ी और सोन नदी के कछार पर बसे रोहतास जिले के अकबरपुर में 15 नवंबर को ''उलगुलान'' विद्रोह के महानायक बिरसा मुंडा के 146 वें जन्मदिवस पर विशाल संकल्प सभा का आयोजन किया गया। संकल्प सभा में कैमूर के पठारी वन क्षेत्र में बसी बस्तियों के आदिवासी और तराई क्षेत्रों से बड़ी संख्या में ग्रामीण शामिल हुए। इस अवसर पर आदिवासी समुदाय अपनी रंग–बिरंगे परंपरागत वेशभूषा, वाद्य यंत्रों, मादल और तीर–धनुष व कुल्हाड़ी जैसे हथियारों से लैस होकर संकल्प सभा में शामिल हुए। बड़ी संख्या में महिलाएं भी झंडा और बैनर लिए हुए शामिल हुईं। जुलूस के आगे–आगे आदिवासी और जनजातीय समुदाय के सांस्कृतिक कर्मी युवक– युवतियां लोक परंपरा के धुन और संगीत पर नृत्य करते हुए एवं क्रांतिकारी गीतों को गाते हुए चल रहे थे। सांस्कृतिक कार्यक्रमों के जरिए कलाकारों ने वनवासियों के संघर्षमय इतिहास को लोगों के सामने जीवंत कर दिया, जिससे पूरा कैमूर पठार शहीद बिरसा मुंडा की याद से जागृत हो उठा।

कैमूर के पहाड़ी और जंगली क्षेत्रों में रह रहे आदिवासियों को आरएसएस–भाजपा सरकार के शासन काल में उजाड़ने एवं वन भूमि के नाम पर उनकी कृषि योग्य जमीन छीनने का अभियान चलाया जा रहा है। वन विभाग के अधिकारी पुराने जमाने के क्रूर जमींदारों की तरह आदिवासियों के साथ पेश आते हैं। सरकार एवं वन विभाग के इस बर्बर हमले का शिकार आदिवासी एवं गैर आदिवासी दोनों हो रहे हैं। आदिवासियों को संविधान द्वारा वन और वन उपजों पर प्राप्त अधिकारों को बर्बर हमलों के जरिए छीना जा रहा है। इन हमलों का मुकाबला वन अधिकार संघर्ष मोर्चा एवं अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा संयुक्त रूप से कर रहे हैं। ऐतिहासिक ''उलगुलान'' विद्रोह के महानायक बिरसा मुंडा द्वारा लगभग 122 वर्ष पूर्व आदिवासियों को उनकी जमीनों से बेदखल करने के खिलाफ छिड़े संघर्ष को स्थानीय लोगों व आदिवासी समुदाय ने मौजूदा परिस्थितियों से समानता करते हुए उस ऐतिहासिक संघर्ष को याद किया।

इस मौके पर आयोजित संकल्प सभा में उलगुलान की महत्ता एवं प्रासंगिकता पर जोर देते हुए वक्ताओं ने कहा कि अंग्रेज शासकों के नक्शे कदम पर चलते हुए केंद्र में सत्तारूढ़ आरएसएस– भाजपा की मोदी सरकार एवं उसकी पिट्ठू नीतीश सरकार द्वारा कैमूर जिला के अघोरा पहाड़ी क्षेत्रों में बसे तमाम गांवों में आदिवासियों एवं गैर आदिवासियों की जमीनों को जंगल जमीन बताकर छीन लिया गया है। यहां तक कि महुआ, नीम, बेहरा आदि वनोपज बीनने पर भी प्रतिबंध लगा दिया है। यही नहीं सरकार द्वारा गठित जांच समितियों ने आदिवासियों के भूमि संबंधी दावा पत्रों को बिना जांच–पड़ताल के रद्द कर दिया है। इसके कारण कैमूर के पठारी और जंगलों में रह रही उरांव, चेरो, खरवार, कोरवा और धाकड़ जनजातियों सहित अन्य जंगल वासियों में सरकार एवं वन विभाग के खिलाफ असंतोष एवं आक्रोश बढ़ता जा रहा है। वन विभाग द्वारा पुलिस एवं सीआरपीएफ के साथ मिलकर आदिवासियों के साथ मारपीट, उनके घर तोड़ने, खेती नष्ट करने और झूठे मुकदमों में फंसा कर जेल भेज देने जैसे मामले बढ़ते जा रहे हैं। इन स्थितियों में कारपोरेट परस्त सरकारों के खिलाफ बिरसा मुंडा के उलगुलान जैसे संघर्ष के रास्ते के महत्व पर संकल्प सभा में चर्चा की गई।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि और अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा झारखंड के एसडी माझी ने बिरसा मुंडा के क्रांतिकारी विचारों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि उनका जन्म 15 नवंबर 1875 को छोटानागपुर क्षेत्र के वर्तमान खुरी जिले के उलीहातू में हुआ था। उन्होंने जर्मन मिशनरी स्कूल में प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की थी और उनके परिवार ने इसाई धर्म स्वीकार कर लिया था। किंतु कुछ समय बाद ही बिरसा समझ गए थे कि वे मिशनरी भी आदिवासियों के खिलाफ ब्रिटिश शासकों का साथ दे रहे थे और बिरसा ने स्कूल और ईसाई धर्म दोनों को ही छोड़ दिया। बाद में उन्होंने ब्रिटिश शासकों द्वारा बाहर से लाए गए जमींदारों, सूदखोरों, ठेकेदारों के खिलाफ संघर्ष छेड़ा। बाद में वह गिरफ्तार कर लिए गए और 25 साल की उम्र में उनकी शहादत हो गई, लेकिन उनके साथियों द्वारा संघर्ष जारी रहा और अंग्रेज शासकों को छोटा नागपुर काश्तकारी कानून बनाने को विवश होना पड़ा। माझी ने कहा कि देश में आरएसएस –भाजपा सरकार आदिवासियों को जंगल से उखाड़ने की लगातार कोशिश में लगी हुई है, लेकिन देश भर में जन आंदोलनों के जरिए उसे चुनौती दी जा रही है।

अखिल भारतीय किसान मजदूर सभा बिहार के का. रुदल कुमार ने कहा कि साम्राज्यवादी ताकतों के लिए मौजूदा आरएसएस–भाजपा सरकार पर्यावरण और जलवायु के नाम पर हजारों वर्ष से जंगलों में रह रहे आदिवासियों को जंगल से भगा रही हैं। इसके खिलाफ चौतरफा संघर्ष की जरूरत है और देश भर में ऐसे संघर्ष चल रहे हैं। सभा को संबोधित करने वाले अन्य वक्ताओं– एआईकेएमएस के जिला अध्यक्ष शंकर सिंह, सचिव अयोध्या राम, किसान नेता आनंद सिंह, इफ्टू के जिला संयोजक दिनेश कुमार सिंह आदि नेताओं ने संघर्ष को तेज करने की अपील की। सभा की अध्यक्षता वन अधिकार संघर्ष मोर्चा के संयोजक धनंजय उरांव और संचालन एआईकेएमएस के सुरेंद्र सिंह ने किया।

संकल्प सभा में 8 सूत्रीय मांगों पर एक प्रस्ताव भी पारित किया गया, जिसमें कहा गया है कि सरकारी वन समितियों द्वारा एफ.आर.ए. 2006 के तहत आदिवासियों के भूमि संबंधी दावों पत्रों का पुनः जांच कर उन्हें स्वीकृति दी जाए। वन विभाग द्वारा आदिवासियों एवं अन्य जंगल वासियों की छीनी गई कृषि जमीन को लौटाया जाए तथा बर्बाद की गई फसलों का मुआवजा दिया जाए। आरक्षित वन क्षेत्रों के नाम पर आदिवासियों को उजाड़ना और उनका विस्थापन रोका जाए। वन उत्पादों को चुनने एवं संग्रहण पर लगी रोक को हटाया जाए। वन विभाग द्वारा निर्दोष आदिवासियों एवं अन्य लोगों पर लगाए गए झूठे मुकदमे वापस हों। जनजातियों की भाषा व संस्कृति की रक्षा की जाए और विभाग के लिए उचित धनराशि मुहैया कराई जाए। जनजातियों एवं वनवासियों पर फर्जी मुकदमे बनाकर पुलिस एवं प्रशासन द्वारा दमन बंद किया जाए। मांग की गई कि कैमूर के पठारी वन क्षेत्र को संवि□ान की पांचवी अनुसूची को शामिल किया जाए।

पेट्रोल डीजल के ऊंचे कीमतो की बड़ी वजह टैक्सों का भार

(पृष्ठ 4 का शेष)

से चलने वाले उद्योगों, पंचतारा होटलों और ऑटोमोबाइल सेक्टर को होता था। शुरुआती दौर में प्रत्येक 3 महीने पर इनकी कीमतों में बदलाव हुआ करता था, लेकिन 15 जून 2017 से नरेंद्र मोदी सरकार ने डायनेमिक फ्यूल प्राइस सिस्टम लागू कर दिया जिससे अब प्रतिदिन तेल की कीमतों में उतार–चढ़ाव होने लगा। अब प्रतिदिन सुबह 6 बजे पेट्रोल पंप पर नई कीमतों पर ग्राहकों को आपूर्ति की जाती है।

मोदी सरकार पेट्रोल डीजल की बढ़ती कीमतों के पीछे हमेशा कुतर्क करती रही है। कभी उसके पेट्रोलियम मंत्री रहे धर्मेंद्र प्रधान कीमतें बढ़ने की वजह ठंड बताते थे। कई मंत्री कांग्रेस सरकार द्वारा जारी किए गए आयल बॉन्ड पर ठीकरा फोड़ते रहे हैं। मनमोहन सरकार ने 2005 से लेकर 2010 तक तेल कंपनियों को बॉन्ड जारी किए थे। अर्थात तत्कालीन सरकार को कैश नहीं खर्च करना पड़ा था। दरअसल केंद्र सरकार के पास तेल कंपनियों, उर्वरक कंपनियों और भारतीय खाद्य निगम जैसे संस्थानों को विभिन्न तरह के बांड जारी करने का अधिकार है। तेल की बढ़ती कीमतें आम जनता पर सीधे प्रभाव ना डालें इसके लिए केंद्र सरकार कुछ नियंत्रण रखा करती थीं। अर्थात अंतरराष्ट्रीय बाजार में उसकी कीमतें घटने बढ़ने पर देश में सरकार अपने मुताबिक उसकी कीमतों को कंट्रोल कर सकती थी। यह बांड कांग्रेस की यूपीए सरकार से पूर्व भाजपा की अटल बिहारी वाजपेई सरकार ने भी जारी किए थे। यू.पी.ए. सरकार द्वारा जारी किए गए लगभग एक लाख 31 हजार करोड़ रुपए के आयल बांड का भुगतान तेल कंपनियों को मार्च 2026 तक किया जाना है।

क्लीयरिंग कारपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (सीसीआईएल) के मुताबिक 2014 से अब तक केंद्र सरकार ने 3500 करोड़ रुपए मूल धन के रूप में चुकाए हैं। ऐसे में ऑयल बॉन्ड के बोझ की दलील बेबुनियाद है क्योंकि मोदी सरकार ने अपने 7 वर्ष के कार्यकाल में लगभग 23 लाख करोड़ रुपए एक्साइज ड्यूटी से कमाए हैं। सरकार ने अपने पहले कार्यकाल के प्रथम वर्ष 2014–15 के दौरान एक्साइज ड्यूटी से पेट्रोल पर 29 हजार 269 करोड़ रुपए और डीजल पर 42881 करोड़ रुपए कमाए थे। मार्च 2021 में लोकसभा में एक सवाल के लिखित जवाब में केंद्रीय वित्त राज्य मंत्री अनुराग ठाकुर ने कहा था कि वित्तीय वर्ष 2020–21 के पहले 10 महीनों के दौरान पेट्रोल और डीजल पर टैक्स से कमाई बढ़कर 2.94 लाख करोड़ हो गई है। यह वह समय था जब देश कोरोना महामारी से जूझ रहा था और लंबी अवधि के लिए लगे लंबे लॉकडाउन के कारण पेट्रोल व डीजल की खपत भी बहुत कम हुई थी। इस तरह मोदी सरकार अप्रत्यक्ष करों के द्वारा बदहाल जनता का खून चूसने में अमादा है जबकि अपने कारपोरेट मित्रों को लगातार रियायतें और टैक्स में छूट देती जा रही है।

जैसे कि लेख में दर्शाया गया है पेट्रोल तथा डीजल की कीमतों में वुद्धि की मूल वजह इन वस्तुओं पर करों का भारी बोझ है। दरअसल सरकार द्वारा अंतर्राष्ट्रीय बाजार में बढ़ते दामों तथा सब्सिडी का प्रचार शासक वर्गों के इस षडयंत्र पर पर्दा डालना है। सरकार द्वारा सब्सिडी दिया जाना तो दूर इस पर लगाये कर सरकार की आय का बड़ा स्रोत हैं। इस मिथ्या प्रचार का मकसद जनता को लूट कर कारपोरेट को दी जा रही रियायतों की ओर से जनता का ध्यान हटाना है।

पेट्रोलियम पदार्थों पर लगाये जा रहे कर और उनके कारण इन पदार्थों की ऊंची कीमतें अन्य वस्तुओं की बढ़ती कीमतों में भी काफी योगदान करती है क्योंकि पेट्रोलियम पदार्थों का उपयोग उत्पादन के साथ–साथ परिवहन में होता है तथा परिवहन कीमतें बढ़ने का असर हर वस्तु के बाजार मूल्य पर पडना स्वाभाविक है तथा पड़ता है। इस तरह कुल महगांई में पेट्रोलियम पदार्थों पर करों के इस भारी बोझ का बड़ा योगदान है। पेट्रोलियम पदार्थों की कीमतों को कम करने की मांग करों के इस बोझ को हटाने की मांग है।

करों के बोझ से पेट्रोलियम पदार्थों की कीमतों का बेतहाशा बढ़ना जहां एक ओर आम जनता के ऊपर बोझ को बढ़ना है वहीं यह देश की अर्थव्यवस्था के लिए भी काफी नुकसानदेह है। वस्तुओं की कीमतों के बढ़ने का प्रत्यक्ष प्रभाव उनके उपभोग पर पड़ता है क्योंकि जनता के विशाल हिस्से की क्रय शक्ति सीमित तथा काफी कम है। मांग की यह कमी उत्पादन के सभी क्षेत्रों पर प्रभाव डालती है जिसका असर औद्योगिक क्षेत्र पर भी देखा जा सकता है। आज भी उद्योगों में रोजगार कोरोना पूर्व के स्तर तक नहीं पहुंचा है। साथ ही जो रोजगार मिल रहे हैं वे अधिकांश अस्थाई तथा ठेका मजदूरों के रुप में हैं। ऐसे रोजगार समाज के आर्थिक जीवन में नियमित रोजगारों जितना योगदान नहीं करते हैं अर्थात अर्थव्यवस्था की वुद्धि पर इनका योगदान अपेक्षाकृत कम होता है। इस व्यापक प्रभाव के कारण बेरोजगारी आसमान छू रही है तथा उसका भयावह प्रभाव पूरे समाज में देखा जा सकता है। बेरोजगारी का सवाल आज समाज के सामने एक बड़ा सवाल है।

कोप 26 : बड़े पूंजीपतियों के मुनाफों के बोझ तले पिस रहा पर्यावरण

भाग लेने वाले 197 देशों ने 13 नवंबर, 2021 को पार्टियों के 26वें सम्मेलन (COP) के अंत में ग्लासगो पर्यावरण समझौते पर मुहर लगा दी। वैश्विक नेताओं ने जीवाश्म ईंधन के लिए सब्सिडी को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने और कोयले के उपयोग को धीरे धीरे कम करने, जो वार्षिक CO2 उत्सर्जन के 40 प्रतिशत के लिए जिम्मेदार है पर सहमति बनाई। हालांकि, इसने विकासशील देशों में गहरी पीड़ा पैदा की जो अभी भी बुनियादी विकास एजेंडे से जूझ रहे हैं। भारत के पर्यावरण मंत्री ने कहा कि जीवाश्म ईंधन के उपयोग ने विकसित दुनिया को उच्च स्तर की संपत्ति और कल्याण प्राप्त करने में सक्षम बनाया है। उन्होंने आगे जोर दिया कि संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (यूएनएफसीसीसी) सभी स्रोतों से ग्रीन हाउस गैस (जीएचजी) उत्सर्जन को कम करने के लिए कहता है न कि विशेष स्रोत का संकेत देता है। इसलिए, किसी विशिष्ट क्षेत्र को लक्षित करना अनावश्यक है !

विकसित और विकासशील देशों के बीच एक और बड़ी लड़ाई पर्यावरण वित्त को लेकर सामने आई। विकसित देशों ने एक दशक पहले 2009 में पर्यावरण परिवर्तन को अपनाने के लिए विकासशील देशों को मदद देने के लिए सालाना 100 बिलियन अमेरिकी डॉलर जुटाने का वायदा किया था। यह वायदा अधूरा रहा। COP26 के दौरान, 1.3 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर की प्रतिबद्धता के बारे में विकासशील देशों की विशेष मांग के बावजूद, परिणाम दस्तावेज में 2025 तक केवल 100 बिलियन अमेरिकी डालर जुटाने का उल्लेख है। इसी तरह, जलवायु परिवर्तन आपदाओं से क्षतिग्रस्त देशों के लिए राहत और पुनर्वास प्रयासों से निपटने के लिए नुकसान और क्षति सुविधा बनाने के लिए कोई गंभीर प्रतिबद्धता नहीं थी।

ज्यादातर विकासशील देशों के नेताओं ने 2030 तक वनों की कटाई को रोकने का वायदा किया। कई लोग इसे पर्यावरण शमन के लिए एक आवश्यक कदम मानते हैं क्योंकि पेड़ CO2 की एक बड़ी मात्रा को सोख लेते हैं। हालाँकि, ऐसी नीति भारत सहित उष्णकटिबंधीय देशों में रहने वाले वन–निवासी मूल निवासी समुदायों के अधिकारों और पहुंच पर गंभीर रूप से प्रभाव डाल सकती है। 100 से अधिक देशों ने मीथेन उत्सर्जन में 30 प्रतिशत की कटौती करने की योजना पर भी हस्ताक्षर किए हैं। भारत सरकार ने इस समझौते पर हस्ताक्षर नहीं किए। इसके अलावा, क्योटो प्रोटोकॉल तंत्र के तहत 2013 के बाद अर्जित पुराने कार्बन क्रेडिट को 2025 तक व्यापार करने की अनुमति देने का प्रावधान किया गया था। यह भारत जैसे देशों के लिए एक राहत थी, जिन्होंने स्वच्छ विकास तंत्र परियोजनाओं में बहुत अधिक निवेश किया था।

दूसरी ओर, COP26 ने मिस्र में अगले शिखर सम्मेलन तक 1.5 या 2 डिग्री सेल्सियस ˙ को पूरा करने के लिए ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में कटौती या राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान को बढ़ाने की अपनी प्रतिबद्धता को स्थगित कर दिया। यह इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए विशेष रूप से निराशाजनक है कि दुनिया में 2020 में वैश्विक लॉकडाउन के दौरान केवल 6.4 प्रतिशत उत्सर्जन में कटौती हुई जो अगले दशक के लिए आवश्यक 7.6 प्रतिशत वार्षिक कटौती के मुकाबले कम है। यह कटौती दुनिया को पूर्व–औद्योगिक स्तर से 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक गर्म होने से रोकने के लिए जरूरी आंकी गई है।

समिट के दौरान भारत सुर्खियों में रहा। 2 नवंबर को, सम्मेलन के दूसरे दिन, प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने 2070 तक (संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन और अन्य प्रमुख G20 देशों की तर्ज पर) भारत के उत्सर्जन को समग्रता में (नेट) शून्य करने के वायदे की घोषणा की। यह घोषणा एक बड़े आश्चर्य के रूप में आई क्योंकि भारत सरकार एक साल से अधिक समय से नेट–जीरो गोल करने के वैश्विक दबाव को खारिज कर रही थी। मोदी ने चार प्रतिबद्धताओं को आगे रखा: गैर–जीवाश्म ईंधन ऊर्जा क्षमता को 500 गीगावाट (GW) तक बढ़ाना; अक्षय ऊर्जा से अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं का 50 प्रतिशत पूरा करना; कार्बन उत्सर्जन में एक अरब टन की कमी; और सकल घरेलू उत्पाद की उत्सर्जन तीव्रता को 2030 तक 45 प्रतिशत तक कम करना। अंत की ओर, भारत फिर से सुर्खियों में आ गया क्योंकि भारत और चीन और अन्य ने अंतिम समझौते के दस्तावेज पर कड़ी सौदेबाजी की, मुख्य रूप से कोयले को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने और विकासशील देशों में जलवायु के अनुकूल संक्रमण के वित्तपोषण के लिए विकसित देशों की प्रतिबद्धता से संबंधित मसौदे पर। बहुत से लोग मानते हैं कि यह भारतीय वार्ताकारों के दबाव में था कि समझौते के अंतिम मसौदे में कोयले के चरणबद्ध रुप से समाप्त की जगह चरणबद्ध रुप से कम में बदल दिया। हालांकि, भारत ने इस दावे को खारिज किया है।

ऊर्जा विशेषज्ञ 2030 तक अक्षय ऊर्जा को 500 GW तक बढ़ाने की भारत की सम्भाव्यता पर सवाल उठाते हैं। अरुणभा घोष कहती हैं कि इसका मतलब है कि अगले नौ वर्षों के लिए हर एक काम के घंटे में लगभग 10 GW–11GW नवीकरणीय ऊर्जा की इस्तेमाल करना । दूसरी ओर, संरक्षणवादी आशीष कोठारी प्रस्तावित मेगा एनर्जी पार्कों के गंभीर पर्यावरणिय परिणामों के बारे में चिंता व्यक्त करते हैं, जिनके लिए सात राज्यों में 10000 वर्ग किमी क्षेत्र चिन्हित किये गये है। इसके अलावा, हम किस आधार पर 2030 तक नवीकरणीय ऊर्जा के माध्यम से 500 गीगावाट ऊर्जा उत्पन्न करने का लक्ष्य रखते हैं जबकि भारत के पास एक परिवार की न्यूनतम ऊर्जा आवश्यकता का लक्ष्य नहीं है। COP26 में, मोदी ने LIFE (पर्यावरण के लिए जीवन शैली) पर एक वैश्विक आंदोलन का आह्वान किया, जबकि भारत के पास अपने संपन्न और उच्च–मध्यम वर्गीय परिवारों द्वारा ऊर्जा के उपयोग का पता लगाने और विनियमित करने की कोई नीति नहीं है। भारत की पर्यावरण शमन नीतियां न तो मौजूदा पारंपरिक स्वदेशी प्रौद्योगिकियों को एकीकृत करती हैं, जिनमें कम कार्बन/पर्यावरणीय पदचिह्न हैं। भारत सहित सभी देशों में नेट–जीरो का रास्ता मुख्य रूप से तकनीकी सुधारों पर निर्भर है। हालांकि, वास्तव में विकसित और विकासशील दोनों देशों में कम कार्बन

(शेष पृष्ठ 8 पर)

असम : सरकार द्वारा जबरन विस्थापन के दौरान हिंसा

(पृष्ठ 2 का शेष)

एजेंसी का कोई निशान नहीं मिला। यह बात लोगों पर किए गए जुल्म को सरकार की एक सचेत व नापाक साजिश के रूप में प्रमाणित करती है।

लोगों की दयनीय परिस्थितियों के वास्तविक और बुनियादी कारण

लोगों के तात्कालिक दुखों से थोड़ा आगे जाकर हम यह महसूस करते हैं कि यह दुख कहीं अधिक गहरे व व्यवस्थित कारणों के लक्षण मात्र हैं। इन कारणों ने कई दशकों से असम के लोगों के एक बड़े हिस्से की आजीविका व जीवन को खतरे में डाल रखा है और इससे निपटने के लिए उत्तरोत्तर सरकारों द्वारा कोई सुनियोजित और वैज्ञानिक नीति विकसित नहीं की गई है।

यह सर्वविदित है कि ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियों ने राज्य के विभिन्न हिस्सों में भूमि के विशाल भूभाग का क्षरण किया है जिसके परिणामस्वरूप राज्य के भीतर लोगों का स्वैच्छिक आंतरिक प्रवासन हुआ है। ब्रह्मपुत्र नदी के इस व्यवहार की निगाह में यह आवश्यक हो जाता है की नदी के कटाव के कारणों, तथा इसके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रभावों को समझने और उनके संभावित समाधान खोजने के लिए व्यापक वैज्ञानिक अध्ययन करवाया जाए। ऐसा अध्ययन ब्रह्मपुत्र नदी के व्यवहार से प्रतिकूल रूप से प्रभावित लोगों को राहत प्रदान करने हेतु एक वैज्ञानिक एवं कारगर नीति तैयार करने का आधार होना चाहिए। यह और बात है कि अपनी स्वार्थ सिद्धि के जुनून में, असम के शासक वर्गों ने इस उद्देश्य की कोई विशेष चिंता नहीं की है। जैसे–जैसे नव–उदारवादी आर्थिक नीतियों के परिणामस्वरूप लोगों के बीच बढ़ते आर्थिक और सामाजिक संकट को दूर करने की उनकी क्षमता सीमित होती जा रही है, उनके पास अपने एजेंडे को आगे बढ़ाने के लिए असमिया समाज में व्याप्त विभाजन रेखाओं को गहरा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं रहा है।

यह ही वह संदर्भ है जो नदी के कटाव से उत्पन्न कठिन सामाजिक और आर्थिक वास्तविकताओं और राज्य में वर्तमान आरएसएस–भाजपा सरकार के सांप्रदायिक एजेंडे के संगम को फलीभूत करता है। यही कारण है कि बंगाली भाषी मुसलमानों को लगातार बाहरी लोगों के रूप में चित्रित करने की आवश्यकता है, भले ही वे असम में रहे हों और पीढ़ियों से इसके विकास में उनका उल्लेखनीय योगदान रहा हो। न केवल हिंदुओं और मुसलमानों के बीच, बल्कि असमिया भाषी और बंगाली भाषी मुसलमानों के बीच भी विभाजन को गहरा करने की कोशिश की जाती है। किन्तु यहाँ इस बात को रेखांकित करने की आवश्यकता है कि नदी का कहर विभिन्न धर्मों को मानने वाले लोगों के बीच अंतर नहीं करता है। बंगाली भाषी मुसलमानों को जो समस्या हुई है, वह अन्य धर्मों का अनुसरण करने वाले समुदायों पर भी पड़ सकती है। उदाहरणतः गुवाहाटी हवाई अड्डे के पास कैतासिद्धि गांव में नाथ पंथ के हिंदू परिवारों (उत्तर प्रदेश के गोरखपुर में गोरखनाथ पंथ से व्युत्पन्न) के निष्कासन नोटिस से स्पष्ट होता है) । इस गांव की पूरी कृषि भूमि पहले ही हवाई अड्डे के लिए ले ली गई है। हालांकि, हाल ही में अडानी समूह को हवाई अड्डा दिए जाने के बाद, सरकार अब इन ग्रामीणों को उनके घर से बेदखल करना चाहती है, शायद हवाई अड्डे के आसपास अदानी समूह द्वारा अचल संपत्ति के विकास की सुविधा के लिए।

परिस्थितियों को देखते हुए, असम और उसके लोगों की भलाई के लिए असमिया समाज के एक वर्ग को दूसरे से अलग करने की कोशिश करने वाले इस तरह के खतरनाक संकीर्णतावाद से ज्यादा विनाशकारी और कुछ नहीं हो सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वर्तमान और भविष्य में असम में किसी भी तरह की घुसपैठ जिस से असम का जनसांख्यिकीय संतुलन बिगड़ जाये, को रोकने के लिए उपाय किये जाने चाहिएं, किन्तु, अब समय आ गया है कि असम के लोग इस बात पर पुनर्विवेचना करें कि मुख्यतः बंगला भाषी मुसलमानों के खिलाफ केन्द्रित असमिया राष्ट्रवाद कि नीति से उन्हें कितना लाभ हुआ है, विशेषकर तब जब कि असम के लोगों की बुनियादी समस्याएं ज्यों कि त्यों बनी हुई हैं।

असमिया राष्ट्रवाद की ताकतों के लिए बेहतर सलाह यही होगी कि वे विभाजनकारी राजनीति के खिलाफ सभी असमिया लोगों को एकजुट कर एक लौह एकता स्थापित करने के लक्ष्य को अपनी राजनीति का केंद्रीय कारक बनायें। तथ्यपरख समझ इस बात में ही है कि स्थायी असमिया पहचान एक समग्र पहचान ही हो सकती है जिसमें विभिन्न धर्मों को मानने वाले और असम में अनेक भाषाओं और बोलियों को बोलने वाले उन सभी लोगों के लिए जगह हो जिनसे मिलकर असमिया संस्कृति का वास्तविक 'ताना–बाना' श्रजित होता हैं।

जनहस्तक्षेप द्वारा नेतृत्व टीम के सदस्य के रूप में हम मांग करते हैं कि:

☐ बेदखल लोगों के जीवन और आजीविका की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा आर्थिक, कानूनी, सामाजिक और राजनीतिक सभी उपाय बिना किसी विलंब के किए जाने चाहिए।

☐ हम मांग करते हैं कि असम सरकार की 2019 की भूमि नीति को तत्काल वापस लिया जाए।

☐ अत्यधिक महत्व की हमारी एक मांग यह भी है कि भौतिक और सामाजिक विज्ञान के विभिन्न विषयों के वैज्ञानिकों की एक टीम का गठन किया जाये जो ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियों से भूमि के कटाव और उसके परिणामों का वैज्ञानिक अध्ययन करे, और इन मुद्दों से निपटने के लिए जनता से व्यापक परामर्श कि प्रक्रिया अपनाते हुए एक दीर्घकालिक नीति तैयार करे।

नागालैंड के मोन जिले में कोयला खदान श्रमिकों और नागरिकों की सामूहिक हत्याओं के दोषी सैन्य अधिकारियों को गिरफ्तार कर दंडित करो

अफस्पा निरस्त करो जो सशस्त्र बलों की दंड मुक्ति का आधार है

सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी 4 दिसंबर की शाम को नागालैंड के मोन जिले में 6 कोयला खदान श्रमिकों की भारतीय सेना की एक इकाई द्वारा सामूहिक हत्या और बाद में फायरिंग की आवाज सुनकर घटनास्थल पर एकत्र हुए ग्रामीणों पर भी गोलीबारी कर 7 अन्य लोगों के नरसंहार की कड़ी निंदा करता है। ये कोयला श्रमिक शनिवार को काम से घर वापस जा रहे थे। तिरु छेत्र में स्थित अपने कार्य स्थल से 15 किलोमीटर दूर अपने गांव ओटिंग के लिए वह एक वाहन में यात्रा कर रहे थे। सेना द्वारा की गई 6 कोयला श्रमिकों की हत्याएं जानबूझकर की गई गोलीबारी का परिणाम है।

सेना ने आनन–फानन में इन हत्याओं को एक गुप्त अभियान की गलत सूचना का परिणाम बता कर मामले को छिपाने की कोशिश की है। सेना और केंद्रीय गृह मंत्री ने हत्याओं पर खेद व्यक्त किया लेकिन यह नरसंहार सेना और सरकार की नागालैंड समेत पूर्वोत्तर के राज्यों में नीतियों का खुलासा करते हैं। केंद्र सरकार ने उत्तर पूर्व के राज्यों और जम्मू कश्मीर में सशस्त्र बल (विशेष शक्तियां) अधिनियम लागू कर रखा है जो सेना को असीमित अधिकार देता है। सेना ने कई दलीलें दी हैं– मसलन मारे गए लोग किसी नागा संगठन से संबंधित हैं या नहीं, वह खुले वाहन में चल रहे थे अथवा सेना को गलतफहमी हुई। साबित करता है कि इस पर सेना या सरकार को कोई पछतावा नहीं है। इस मामले की लीपापोती कर सरकार सशस्त्र बलों को दंड से बचाने और उत्तर पूर्वी राज्यों के लोगों के दमन की नीति को जारी रखना चाहती है।

नागरिकों की निर्मम हत्याओं के परिणाम स्वरूप नागालैंड और आसपास बसी हुई नागा जनता, मणिपुर असम और अन्य पड़ोसी राज्यों, में गुस्से की गंभीर लहर फैल गई है। अनेक गांवों ने अपने गांव के बाहर साइन बोर्ड लगा दिए हैं जो घटना की जिम्मेदार और भारतीय सेना के एक अंग के रूप में असम राइफल्स के प्रवेश पर रोक संबंधी हैं। मोन जिले में असम राइफल्स के कार्यालय के बाहर स्थानीय लोगों के प्रदर्शन पर भी फायरिंग हुई जिसमें एक प्रदर्शनकारी की मौत हो गई। स्थानीय ग्रामीणों का कहना है कि डिब्रुगढ़ में असम मेडिकल कॉलेज सहित विभिन्न अस्पतालों में 11 घायल लोग भर्ती हैं और दो लापता हैं, जिन्हें मृत माना जा रहा है।

नागालैंड और पूर्वोत्तर के अन्य राज्यों में इतना गुस्सा है कि नागालैंड व मेघालय के मुख्यमंत्रियों ने एएफएसपीए को निरस्त करने की मांग की है। कुछ संसदीय विपक्षी दलों ने भी अफस्पा कानून को निरस्त करने की मांग की है। इन हत्याओं ने देश का ध्यान इस अधिनियम पर केंद्रित कर दिया है जिसे भारत में दमनकारी काले कानूनों का ताज कहा जाता है। इस अधिनियम का अस्तित्व उन क्षेत्रों में शासन के वास्तविक चरित्र को दर्शाता है जहां यह लागू है और सेना उन लोगों को वश में कर रही है जिन्हें दुश्मन माना जाता है। इसलिए अब इस कानून को अविलंब निरस्त कर दिया जाना चाहिए। न्यायमूर्ति मदन लोकुर द्वारा दिए गए फैसले में इसके दुरुपयोग को रोकने के लिए कुछ निर्देशों के साथ इस कानून को सुप्रीम कोर्ट ने बरकरार रखा था लेकिन कानून अपने आप में ही कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग है और इसलिए यह निदेश स्पष्ट रूप से कागज पर मात्र पवित्र इच्छा बनकर रह गया है। ऐसे में इसे समाप्त करने से कम और कुछ स्वीकार्य नहीं हो सकता।

गौरतलब है कि केंद्र में सत्तारूढ़ आरएसएस–भाजपा सरकार ने नागा संगठनों के साथ शांति प्रक्रिया को छोड़ दिया है। नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल आफ नागालैंड (आई–एम) के साथ 2015 में समझौते के ढांचे पर सहमति पर हस्ताक्षर करने के बाद भी शांति प्रक्रिया को जारी नहीं रखा गया। बल्कि नागालैंड के लोगों पर दमन तेज हो गया है। अब समय आ गया है कि भारत सरकार नागा हिल्स में शांति के एजेंडे को आगे बढ़ाने के लिए एनएससीएन (आई–एम) के साथ सार्थक बातचीत फिर से शुरू करे और सशस्त्र बलों के इस्तेमाल के जरिए इस मुद्दे का समाधान करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। इन हत्याओं ने आरएसएस–भाजपा सरकार द्वारा उत्तर पूर्व में अपनाई जा रही नीति की ओर देश का ध्यान आकर्षित किया है।

सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी की केंद्रीय समिति मांग करती है कि इन सामूहिक हत्याओं के लिए जिम्मेदार सैन्य अधिकारियों को तुरंत गिरफ्तार किया जाए और उन पर मुकदमा चलाया जाना चाहिए। हम मांग करते हैं कि असम राइफल्स सहित सेना को नागालैंड राज्य सहित उत्तर पूर्वी राज्यों के सभी नागरिक क्षेत्रों से तुरंत हटा दिया जाए।

सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी की केंद्रीय समिति जोरदार ढंग से यह मांग करती है कि अब अफस्पा को तुरंत निरस्त किया जाना चाहिए। सभी राज्यों में लोगों के लोकतांत्रिक अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए। हम यह भी मांग करते हैं कि केंद्र सरकार एनएससीएन (आई–एम) के साथ शांति प्रक्रिया फिर से शुरू करे और नागा संगठनों के साथ सार्थक बातचीत करनी चाहिए ताकि नागा क्षेत्रों में नागाओं की आकांक्षाओं का सम्मान करते हुए शांति स्थापित की जा सके।

सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी की केंद्रीय समिति ने सभी क्रांतिकारी ताकतों, जन संगठनों और लोकतांत्रिक अधिकार संगठनों का इन हत्याओं के दोषियों को दंडित करने, अफस्पा को निरस्त करने, लोगों के लोकतांत्रिक अधिकारों पर अमल के लिए और सार्थक बातचीत की बहाली हेतु सरकार को मजबूर करने के लिए जोरदार ढंग से आवाज उठाने का आह्वान किया है।

(सीपीआई (एम-एल) न्यू डेमोक्रेसी की केंद्रीय समिति द्वारा 6 दिसंबर 2021 को जारी वक्तव्य का अनुवाद)

लखनऊ में 22 नवंबर 2021 को संयुक्त किसान मोर्चा (एसकेएम) की एक बड़ी रैली (महापंचायत) हुई जिसमें पूरे उत्तर प्रदेश से किसानों ने अच्छी संख्या में भागीदारी की। सुबह से ही रेलवे स्टेशनों, बस अड्डों और अपने वाहनों से हजारों–हजारों किसानों के जत्थे महापंचायत स्थल तक नारे लगाते हुए पहुंचने लगे थे। तीन कृषि कानूनों की वापसी के बाद किसानों का उत्साह देखते बनता था। किसान रैली को संयुक्त किसान मोर्चा के नेताओं और भाग लेने वाले किसान संगठनों के राज्य स्तरीय नेताओं ने संबोधित किया। किसान नेताओं ने साफ तौर पर कहा कि एमएसपी गारंटी कानून बनाने, बीज व बिजली बिल रद्द करने, लखीमपुर खीरी कांड के जिम्मेदार केंद्रीय गृह राज्य मंत्री अजय मिश्र टेनी की गिरफ्तारी, डेढ़ वर्ष से चल रहे किसान आंदोलन के दौरान शहीद हुए लगभग 700 किसानों के परिजनों को मुआवजा और नौकरी के अलावा आंदोलन के दौरान किसानों व नेताओं पर दर्ज सभी मुकदमों की वापसी के बगैर आंदोलन समाप्त नहीं होगा। रैली में मौजूद हजारों किसानों ने इन मांगों से संबंधित नारे लगाकर अपनी सहमति व्यक्त की। रैली में पूरे प्रदेश से एआईकेएमएस कार्यकर्त्ताओं ने भागीदारी की।

कोप 26

(पृष्ठ 7 का शेष)

खपत वाले मॉडल पर आधारित जीवनशैली में बदलाव की आवश्यकता है। दुर्भाग्य से, इस संबंध में सीओपी26 के दौरान मोदी के भाषण जैसी कुछ जुमलेबाजी के अलावा शायद ही कोई गंभीर प्रयास देखा गया हो। तो, क्या ग्रेटा थुनबर्ग का यह कहना सही है कि शिखर सम्मेलन में राजनेता केवल "हमारे भविष्य को गंभीरता से लेने का नाटक कर रहे थे"? भारत अब विश्व स्तर पर पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है, और नाइट फ्रैंक की वेल्थ रिपोर्ट 2020 में अगले पांच वर्षों में अल्ट्रा हाई–नेट–वर्थ व्यक्तियों (यूएचएनडब्ल्यूआई) की संख्या में 73 प्रतिशत की वृद्धि का अनुमान है। भारत साम्राज्यवादी शक्तियों के पैसे के बिना पर्यावरण के अनुकूल विकास पथ के बारे में क्यों नहीं सोच सकता?

एक अतिरिक्त प्रश्न यह भी है कि भारत की सरकारें स्थानीय कार्य बल का उपयोग प्रदूषण की जाँच, अच्छे फुटपाथ बनाने के लिए क्यों नहीं करती हैं ताकि लोग अपने अगले दरवाजे की किराने की दुकान तक चल कर जा सकें। भारत में प्रौद्योगिकी का उपयोग नगरपालिका कार्यों और सफाई गतिविधियों में क्यों नहीं किया जा सकता है ताकि धूल प्रदूषणकारी गैसों के साथ न मिले और ग्लोबल वार्मिंग को और न बढ़ाए। वास्तव में, भारत को विकास की जरूरतों की आड़ नहीं लेनी चाहिए और सामाजिक और स्थानीय बुनियादी ढांचे के विकास के लिए पर्याप्त प्रयास करना चाहिए।

(आशु)

If Undelivered, Please Return to

Pratirodh Ka Swar

Monthly

Balmukand Khand,
Girinagar,
New Delhi-110019

Hindi Organ of CPI(ML)-New Democracy

R. N. 47287/87

Book Post

To

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी यतेन्द्र कुमार द्वारा स्टार ऑफसेट, टी-2151/8-ए-2, न्यू पटेल नगर, नई दिल्ली-110008 से मुद्रित व बालमुकन्द खण्ड, गिरी नगर, नई दिल्ली-110019 से प्रकाशित। सम्पादक : यतेन्द्र कुमार